राष्ट्र के लौहस्तम्भ

लेखक—
आचार्य श्रीचतरसेन शास्त्री

सोल एजेन्ट्स —
चन्द्रा पुस्तकालय,
चूना मंडी, नई दिल्ली।

४१ } { मू० १)

दो शब्द

'अमीरों के रोग' और 'राष्ट्र के लोहस्तम्भ'—इन दोनों पुस्तकों के लेखक आचार्य श्रीचतुरसेन शास्त्री हिन्दी के सिद्धहस्त कहानी लेखक, महान् उपन्यासकार तथा समाज-सुधारक तो हैं ही, किन्तु उनका वैद्यक और शरीर-विज्ञान का ज्ञान कितना अधिक विस्तृत और परिमार्जित है, इस बात को हिन्दी के पाठकों से अधिक वे राजे-महाराजे, वे रईस और जमींदार, वे नेता और राजनीतिज्ञ महापुरुष जानते हैं, जो अपने स्वास्थ्य-सुधार के लिए सब ओर से निराश होकर और शास्त्री जी द्वारा आरोग्य-लाभ करके चिरन्तन उन्हीं के यश का गान करते हैं।

शास्त्री जी की वैद्यक-ज्ञान-निपुणता के सम्बन्ध में हमें अधिक कुछ नहीं कहना। हम इन दोनों पुस्तकों को ही, जो अभी तक अन्धकार में पड़ी हुई थीं, अपने पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। पाठक स्वयम् देख लेंगे कि उनका शरीर-शास्त्र का ज्ञान, उनकी लेखन-कला-दक्षता के साथ मिलकर, इन दोनों पुस्तकों में कितना प्रज्वलित

हो उठा है। भाषा की सरलता, छोटे-छोटे वाक्य, और उन वाक्यों में शरीर-शास्त्र के निगूढ़तम तत्त्वों का समावेश "गागर में सागर" भरने की याद दिलाता है।

इन शब्दों के साथ हम शास्त्री जी की, उनके बहुत से प्रेमी पाठकों से छिपी हुई, इस कला के ये दो अलभ्य-ग्रन्थ उनके सामने प्रस्तुत करते हैं।

निवेदक—

—चन्द्रा।

पुत्र

अध्याय पहिला

पुत्र का माहात्म्य

'पुत्र' एक अति छोटा सा शब्द है, पर इसका मूल्य पृथ्वी भर की समस्त सम्पदाओं से अधिक है। इस शब्द में एक ऐसा भेद छिपा है कि जिसकी वैज्ञानिक परिभाषा आज तक कोई तत्ववेत्ता नहीं कर सका। जब हम देखते हैं कि बड़े २ शहनशाह, राजा-महाराजा और सेठ साहूकार अपनी विशाल सम्पदा को केवल अपने पुत्र के लिए अनायास ही छोड़ जाते हैं, आमरण पुत्र का स्वार्थ चिन्तन

करते हैं-तब हमें 'पुत्र' के अद्भुत अस्तित्व पर आश्चर्य होता है। पृथ्वी पर मनुष्य सबसे अधिक स्वार्थ का कीड़ा है, परन्तु वह केवल पुत्र के लिये ही सर्वाधिक स्वार्थ त्याग करता है। पुत्र जन्म माता के लिये कम कष्ट का नहीं। परन्तु पुत्र जन्म के हर्ष में वह कष्ट इस भाँति हवा हो जाता है मानों वह एक जादू का काल्पनिक कष्ट हो, माताएं हंसते २ उसे सहतीं हैं। और बहुत सी प्राण भी देती हैं। जन्म के बाद उनके पालन पोषण में भी दिक्कत और कष्ट का पार नहीं रहता। उन अबोध पुत्रों को आहार दे दे कर पुष्ट करना, उनकी अनथक रात दिन सेवा कर उन्हें तिल २ बढ़ाना, उनके मल मूत्र साफ करना, उन्हें हाथों में लिये रातों को काटना—यह मनुष्य जैसी स्वार्थी और आराम तलब जाति के लिये आश्चर्यजनक स्वार्थ त्याग है। और इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि उसने कभी भी 'पुत्र' को छोड़ कर और किसी के लिए ऐसा स्वार्थ त्याग नहीं किया, न करने की आशा है।

पुत्र बड़ा होता जाता है और माता पिता और भी लगन से अपने आपको भूल कर उसके प्राणों में मिलने लगते हैं। हर समय उनकी आँखें और आत्मा उसी में लीन हुई रहतीं हैं। मानों उन्होंने अपने शरीर और जीवन का

मोह त्याग दिया है, वे पुत्र के नवीन वृद्धिगत शरीर में सम्मिलित हो गये हैं—वे पुत्र के साथ रोते हँसते मरते और जीते हैं। अधिक युवा होने पर पुत्र का विवाह होता है तब माता अपना सर्वाधिकार पुत्र वधू को और पिता अपना सर्वाधिकार पुत्र को दे देता है। वह दोनों घर द्वार कार बार और सम्पदा के अनायास ही स्वामी बन बैठते हैं। उनके दिये आदर के ग्रास खा कर माता पिता अपने को धन्य समझते हैं। अन्त में वे अपनी उपार्जित समस्त सम्पदा-यश-गौरव मान पुत्र को देकर स्वयं संतोश से जीवन लीला संवरण करते हैं। क्या पुत्र के सिवा कहीं और भी मनुष्य ने इतना त्याग किया है ?

यह अमीरों की ही बात नहीं। घोर दारिद्रावस्था में भी जिनका जीवन कट रहा है, वे भी अपने प्यारे पुत्र के सरल सुन्दर हास्य को देख अपना जीवन धन्य समझते और दारिद्र्य को दारिद्र्य नहीं समझते हैं। एक बार एक दरिद्र माता से किसी ने पूछा था कि तेरी सम्पत्ति कितनी है। तब उसने कहा था—अटूट है। और फिर उसने स्कूल से आते हुए अपने पुत्र को दिखाकर कहा था कि 'वह यह है'।

जिन घरों में विश्व की सम्पदा भरी हो। नौकर चाकर

ऐश आराम, हुकूमत, सब कुछ हो, राज पाट, सेना हो। संसार उनके वैभव और आनन्द को देखकर ललचाता हो - परन्तु यदि उनके घरों में पुत्र की मधुर मुस्कान भरी घटा नहीं है तो वह सुख सुख नहीं घोर दुःख है। उस दुःख को वे ही अभागे जान सकते हैं जिन्हें सारा संसार भाग्यवान् कह कर पुकारता है। महाराज दशरथ, दिलीप, और बहुत से पुराण पुरुषों के ऐसे चरित्र हमको देखने को मिलते हैं जिन्होंने पुत्र के अभाव में पृथ्वी भर की सम्पदाओं को तुच्छ समझा था।

पुत्र के मुख मण्डल में, उनकी निर्व्याज मुस्कुराहट में तोतली वाणी और रस भरी आँखों में, स्वर्गीय ज्योति होती है, बड़े ही पुण्य के प्रताप से मनुष्य को पुत्र लाभ होता है। संसार के तापों से उत्तप्त पुरुष को पुत्र के भोले मुसकान में शान्ति मिल सकती है। धूल से भरा मुख, तोतली वाणी से पिता पुकारना, एक ऐसा मरहम है जिससे हृदय के असाध्य और दुखदाई घाव भी भर जाते हैं।

बहुत प्राचीन काल से पुत्र की इतनी प्रबल लालसा राजा और रंक सभी के हृदय में रही है। पुत्र हीन पुरुष अपने को जीवित नहीं समझता। उसका जीवन जीवन नहीं मृत्यु है। हम यह विश्वास पूर्वक कह सकते हैं कि

जितनी सन्तान की लालसा मनुष्य को है उतनी कदाचित् ही किसी को मोक्ष की होगी।

'पुत्र' शब्द में आशा, भरोसा, नैसर्गिक प्रेम, त्याग और मोह न मालूम कितने अर्थ, कितने भाव भरे पड़े हैं। इसका कारण अवश्य ही बहुत गम्भीर होना चाहिए। और वह वैसा ही है भी। सन्तान ही देश, जाति और समाज की अक्षय सम्पत्ति, ज्वलन्त गौरव और सामूहिक जीवन का चिन्ह है। इसीलिये शास्त्रों में इसकी भारी महिमा गाई गई है। भगवान् पतञ्जलि चरक संहिता में लिखते हैं कि –

"अच्छायश्चैक गन्धश्च निष्फलश्च यथा द्रुमः।
अनिष्ट गन्धश्चैकः निरपत्यस्तथा नरः॥
अप्रतिष्ठश्च नग्नश्च शून्यश्चैकेन्द्रियश्चना।
मन्तव्यो निष्क्रियश्चैव यस्यापत्यं न विद्यते॥

वहुमूर्तिर्वहुगुणो बहुव्यूहो वहु क्रियः।
वहुचक्षुर्वहुर्ज्ञानो वह्वात्मा च वहु प्रजः॥
माङ्गल्योयं प्रशस्तोऽयं धन्योयं बीर्यवानयम्।
वहु शाखोऽयमिति च स्तूयते ना वहु प्रजः॥
प्रीतिर्वलं सुखं वृत्तिर्विस्तारो विभवः कुलम्।
यशो लोकाः सुखोदर्कास्तुष्टिश्चापत्य संश्रिता।
तस्मादपत्य मन्विच्छन्गुणांश्चापत्य संश्रितान्॥"

"जैसे बिना छाया का और गन्धरहित या दुर्गन्धित वृक्ष होता है वैसा ही पुत्रहीन पुरुष है। वह अप्रतिष्ठित है, नग्न है, शून्य है, एकेन्द्रिय है तथा निरक्रय है।"

"परन्तु पुत्रवान् व्यक्ति बहुत गुणों और बहुत क्रिया वाला, बहुत व्यूहों वाला, बहुत से नेत्रों और ज्ञान वाला, बहुत सी आत्मा और बहुत सी प्रजा वाला होता है। वह माङ्गल्य है, वह प्रशंसनीय है, वह वीर्यवान् है, वह कुटुम्बी कह कर पूजा जाता है। उसे प्रीति, बल, सुख, तृप्ति, विस्तार, विभव, कुल, यश, आनन्द सभी प्राप्त होते हैं। इसलिये लोग गुणी पुत्र की इच्छा करते हैं।"

पुत्रहीना स्त्रियाँ तिरस्कार और सन्देह से देखी जाती तथा उनका तिरस्कार किया जाता है।

प्राचीन उपाख्यानों और पुराणों में पुत्र के लिए बड़े २ यज्ञ और अनुष्ठान करने के विधान हैं। भारी तपों का भी उल्लेख है।

यह बात बड़े २ वैज्ञानिक स्वीकार करते हैं कि किसी जाति अथवा देश की उन्नति उस जाति अथवा उस देश के लोक समुदाय की व्यक्तिगत उत्तमता पर निर्भर है। अबसे २-३ सौ वर्ष पहिले रोम-रिपब्लिक में भी ऐसे ही क़ानून बनाने का प्रस्ताव पास हुआ था कि अयोग्य स्त्री पुरुष

पुत्र न पैदा करने पावें। जिस से राष्ट्र का पतन हो जाय। उन्होंने ऐसे क़ानून बनाये थे जिस से सर्व श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न हो। जिस से सारा राष्ट्र पवित्र और शक्ति सम्पन्न बन जाय।
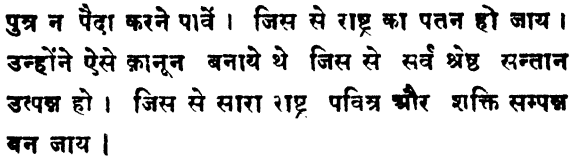
भारतीय विधान शास्त्रों में विवाह की मर्यादा, कुल गोत्रों की छान बीन इसी आधार पर निर्भर है। वर कन्या के गुण, कर्म, स्वभाव मिलने ही पर विवाह होता था। संस्कार हीन, चरित्रहीन कुल में, क्षय या कुष्ट वाले कुलमें, सगोत्रियों में, विवाह नहीं हो सकते थे। अनुकूल पति पत्नी न मिलने पर आजन्म अविवाहित रहने का विधान था।

मेडले ने जो इटली का उत्कृष्ट विद्वान् था। उसने 'अभिजनन' विज्ञान की नीव डाली थी। इसके बाद इंग्लेण्ड के विद्वान् सर फ्रांसिस गाल्टन ने इस सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा। उन्होंने लन्दन यूनिवर्सिटी को ६ लाख ७५ हज़ार रु० इसलिये दान किया था कि इसी विषय का अन्वेषण करने के लिए एक सुयोग्य प्रोफेसर रखा जाय।

यह बात अब सब समझ गये हैं कि योग्य देश वाले अयोग्य देश वालों के मुँह की रोटियाँ छीन लेंगे। और अपने से दुर्बल देश वालों को कुचल कर अपनी रक्षा करेंगे।

गत ३ हज़ार वर्षों में बहुत से देश की जातियों का लोप हो गया है। अफरीका, अमरीका, न्यूजीलैण्ड आदि देशों के निवासी लोप होते जा रहे हैं। और अधिक योग्यता वाले देशों ने उनके स्थान पर अधिकार स्थापित कर लिया है। उन पुरानी जातियों का फिर से सितारा चमकेगा इस की कोई आशा नहीं की जा सकती।

भारत वर्ष स्वयं ही ऐसे ह्रास का विषय है। जिसका उदाहरण प्रमाण के तौर पर दिया जा सकता है। गत ५० वर्षों में हिन्दुओं की संख्या यद्यपि बहुत धीरे २ घट रही है, परन्तु वह तपेदिक के रोग की भाँति भयानक और निराशाजनक है। यदि हिन्दू बच्चों की नस्ल न सुधारी जाय तो हिन्दुओं का सर्वनाश हो सकता है। यदि इस बात को ध्यान से देखा जाय कि किस भाँति विदेशी जातियाँ भारत के हिन्दुओं को हटाती हुई भारत में फलती फूलती रही हैं तो इस सचाई पर कुछ न कुछ प्रकाश अवश्य ही पड़ेगा।

प्रजनन या सुसन्तान शास्त्र बहुत गम्भीर है। उसके लिये जीव विद्या, समाज शास्त्र और धर्म शास्त्र एवं आचार शास्त्र के ज्ञान की भी आवश्यता है। भारत के प्राचीन आचार्यों ने प्रजनन शास्त्र पर बहुत से महत्वपूर्ण ग्रन्थ

लिखे थे। उनमें पुरुषों के बलवीर्य सतेज बनाये जाने और जनेन्द्रिय की निर्बलता दूर करने के अमोघ प्रयोग थे। यह उस काल की बात है जब कि भारत के पुत्रों को सारे संसार का प्रबन्ध, हुकूमत और शासन करना पड़ता था। और जल थल और आकाश में उसकी शक्तियाँ उड़ती थीं। तब उसे बहुत से वीर, मेधावी पुत्रों की चाह थी। इसी कारण एक पुरुष को कई स्त्रियाँ रखने का रिवाज़ भी जारी हो गया था कि जिस से एक पुरुष सैकड़ों सन्तान पैदा करता था—वे सारे ग्रन्थ रत्न आज से २ हज़ार वर्ष पूर्व ही नष्ट हो गये। इस सम्बन्ध में महादेव के अनुचर नन्दी ने एक हज़ार अध्याय का एक कामसूत्र रचा था। उसी को श्वेत केतु औद्दालक ने ५०० अध्यायों में संक्षिप्त किया था फिर उसे वाभ्रव्य ने १५० अध्यायों में संक्षिप्त किया था। और भी बहुत से ग्रन्थों का उल्लेख मिलता है। वात्स्यायन का कामसूत्र अब भी मिलता है।

प्राचीन इतिहास हमें यह भी बताते है कि उन्होंने सन्तति सुधार के सम्बन्ध व्यवस्थापित करने के ऐसे नियम बनाए थे। जिस से उनका सामाजिक संगठन बहुत

ही सुन्दर हो गया था। इस प्रकार उन्होंने देश, काल, धर्म की ठीक सीमा बना रखी थी।

योरोपीय विद्वानों ने भावी सन्तति के शारीरिक और मानसिक सुधार के बहुत कुछ प्रयत्न किये हैं। परन्तु उनमें वह समाज संगठन नहीं उत्पन्न हुआ कि जिसके आधार पर समाज में शान्ति की स्थापना हो सके। ज्यों २ योरोप के युवक सतेज और सुगठित होते जाते हैं, अशान्ति और अव्यवहारिक असहनशीलता मानव समाज में बढ़ती जाती है। भारत ने जैसे बिना माथे पर बल लाए राज्यों को त्याग देने वाले युवक पैदा किये, जीवन और मृत्यु, सम्पदा और विपत के समदर्शी पुरुष उत्पन्न किए, वैसे पृथ्वी पर कहीं भी नहीं उत्पन्न हुए।

वेद में लिखा है—

सुप्रजाः प्रजाभिः स्यां सुवीरो वीरैः सुपोः पोषैः।
नार्य प्रजांमे पाहि शस्त पशून्मे पाह्यथर्यपितुंमेपाहि।
[य० अ० ३० मं ३७]

अर्थात् मैं विविध सुख से युक्त होकर उत्तम प्रजायुक्त होऊं। उत्तम पुत्र, बन्धु, सम्बन्धी और भृत्यों के साथ उत्तम वीरों के सहित होऊं।

मनु ने लिखा है—

प्रजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः सन्तानार्थञ्च मानवाः ।

तस्मात् साधारणो धर्मः श्रुतिः पत्न्या सहोदितः ॥

अर्थात् गर्भ धारण करने कराने के लिए स्त्री पुरुषों की सृष्टि है । इसलिये स्त्री पुरुष को संयुक्त रहना साधारण धर्म है ।

'पुं' नाम नरक से जो पिता की रक्षा करता है, वह पुत्र कहलाता है । 'पुनाति स्ववंशान् इति पुत्रः' अर्थात् जो अपने वंश को पवित्र करे, वही पुत्र कहाता है । पुत्र अपने अच्छे कर्मों से १० पीढ़ी आगे के अपने पूर्वजों को, दश पीढ़ी पीछे की अपनी संतति को तथा स्वयं अपने आपको इस प्रकार कुल २१ पीढ़ियों को मुक्त और पवित्र कर सकता है ।

प्राचीन शास्त्रकार बताते हैं कि 'अपुत्रस्यगतिर्नास्ति' पुत्र रहित की गति नहीं हो सकती ।

इन वाक्यों से इस बात पर भारी प्रकाश पड़ता है कि पुत्र का कितना महत्व भारत में माना जाता रहा है । इस महात्म्य का ठीक २ अर्थ न समझ कर इसका दुरुप-योग भी खूब हुआ । योग्यायोग्य का ख़याल न कर सभी को पुत्र प्राप्ति की इच्छा उत्पन्न हो गई । परमार्थ और मुक्ति की साधना के विचारों ने साधारण लोगों को बहुत

भ्रम में डाल दिया। और महिमा की कथा पढ़कर वे अपने को भी बिना पुत्र के धिक्कार योग्य समझने लगे।

सैकड़ों वर्षों से हिन्दुओं में श्राद्ध की परिपाटी चली आ रही है। लोगों का विश्वास है कि जो पुत्र पिता माता का श्राद्ध नहीं करता और पिण्डदान नहीं करता उसके माता पिताओं की सद्गति नहीं होती। इस विचार के आधार पर मनुष्यों ने न तो इस बात को देखने की परवा की कि पुत्र जीवेगा कि मरेगा। धर्मात्मा हो या कि पापी, देशद्रोही, पितृघातक व्यभिचारी, कपटी आदि जो कुछ भी हो, इसकी परवा नहीं। पिता माता यह भी नहीं समझना चाहते कि हम पुत्र को पढ़ा लिखा सकेंगे। उन की परवरिश कर सकेंगे। उन्हें श्रेष्ठ पुरुष बना सकेंगे भी या नहीं। वे केवल पुत्र पैदा करके धरती पर डाल देना चाहते हैं। जैसे कौवे, कुत्ते, बिल्ली, बन्दरों के बच्चे पैदा होते और मरते हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि आज दिन लाखों व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें इस बात की कोई परवा नहीं कि उनका पुत्र कहाँ मारा २ फिरता है, क्या करता, क्या खाता पीता है। साथ ही, ऐसे पुत्रों की भी कमी नहीं जिन्होंने जीवित अवस्था में कभी माता पिता की सेवा नहीं की, उलटा उन्हीं का जीवन चूस २ कर

खाया, पर पिता माता के मरने पर वे श्राद्ध करके पिता माता का तर्पण करते हैं। कैसी विडम्बना है।

पुत्र पिता को नर्क से उद्धार करता है कि नहीं, इस बात पर हम विचार नहीं करना चाहते। न हमने इसे आंखों देखा न देखकर उसका अनुभव लिखने फिर यहाँ आने की आशा है। हम तो सिर्फ़ सीधी बात यह जानते हैं कि सुख ही स्वर्ग और दुःख ही नर्क है। भय, चिन्ता, पराधीनता, कष्ट, रोग, शोक, ये दुःख हैं। इनसे मुक्त करा देना नर्क से मुक्त करा देना है। माता पिता की सुगमता के लिए, कुल, जाति या स्वदेश के उद्धार के लिए, संसार के प्राणी मात्र के कल्याण के लिए बड़ों के आरम्भ किए कार्यों को पूर्ण करने के लिए कुल दीपक पुत्रों की आज भी आवश्यकता है, और सदा बनी रहेगी, पर कुपुत्र से तो माताबन्ध्या ही अच्छी। कहा है—

जननी जने तो शूर जन, क्या दाता क्या शूर।
कायर पुत्र बनाय के, मती गंवावे नूर॥

नीति में भी लिखा है—

गुणिगणगणनारम्भे न पतति कठिनी ससंभ्रमं यस्य।
तस्याम्वायदि सुतनी वद वन्ध्या की हषी भवती।

अर्थात्-गुणियों की गणना–करती वार जिसकी ओर

आदर से सर्व प्रथम उंगली नहीं उठती। उसकी माता यदि पुत्रवती कही जाय तो फिर बाँझ कौन कहायेगी।

मनमानी सन्तान पैदा करने ही के कारण देश पतित हो रहा है। सबसे अधिक शोक की बात तो यह है कि माता पिता अयोग्य और भयानक रीतियों से पुत्र पैदा करने के विश्वास भी रखते हैं।

क्या नर और क्या नारी सभी पुत्र की लालसा में भटक रहे हैं। पहले बिना सन्तान कोई भी नहीं मरता था, अब सन्तान प्रथम तो उत्पन्न ही होना कठिन। तिस पर जीती जागती रहना दुस्तर है। हमारी माताएँ इसी लालसा में मर मिटती हैं। सहस्रों दुष्ट जनों की भी ऐसे अवसरों पर बन आती है, कोई पीर साहेब, कोई ग़ाज़ी मियाँ, कोई सय्यद साहेब, कोई पैग़म्बर आदि को सन्तान उत्पन्न का साधन बता देते हैं तो ये सन्तान के इच्छुक पागलों की तरह उन्हीं के पास जाकर उनकी भेंट पूजा में अपनी पसीनों की कमाई पानी की तरह बहा देती हैं। ऐसे सैकड़ों माता पिता पापिष्ट नीच, दुराचारी विधर्मियों के अपवित्र चरणों पर अपने नेत्रों के अमूल्य मोती न्यौछावर करते और सन्तान की भीख माँगते जब हम अपनी पूज्य माता और बहनों को देखते हैं तो हृदय फटने लगता है।

पर रुपया पैसा, ज़ेवर, धन सब कुछ लुटाकर भी वे अभागिनी की अभागिनी ही बनी रहती हैं। उनका सूखा अस्थिमय शरीर गण्डे तवीज़ों से भरा रहता है। इन सब को देखकर आँखें भर आती हैं। हा! अभागी भारत सन्तान! वीर प्रसूतियों की यह दुर्दशा! जिनके प्रताप का सारा संसार लोहा मानता था, वे भंगी, चमार, डोम, मुसलमानों के पैरों गिर कर सन्तान की भीख माँगती फिरें!

यह सब अनर्थ होने पर सन्तान का दिन २ ह्रास होता जा रहा है—निपूतों की संख्यायें बढ़ती जा रही हैं। जिनके पुत्र भी होते हैं वैसे पुत्रों से न होना अच्छा जिन माताओं ने राम भीष्म कृष्ण पैदा किये थे। हिमालय की जिन स्वच्छन्द कन्दराओं में कपिल व्यास और गौतम बैठे भगवान् भारत का यश गान करते थे। जिस देश की बनस्पति और वृक्षों के पत्तों को खा २ कर गौतम और कणाद ने न्याय और वैशेषिक की गूढ़ फ़िलासफ़ी प्रोद्भावित की है, वही भूमि अब ऐसी पोच और निकम्मी सन्तान पैदा करने लगी है कि उसे सादर गुरु मानने वाले आज उन्हें मनुष्य समाज में अपने चरणों में स्थान देना अपनी हेठी और अपमान समझते हैं? इसका क्या कारण है? क्या हिमा-

काय की वायु में अमृत नहीं रहा? भारत की भूमि क्या अब वैसे फल, अन्न, नहीं पैदा करती ? गंगा जल में क्या वही जल नहीं रहा ? यह सब तो है ? फिर हम मनुष्य क्यों नहीं रहे ? गुरु पन गया-मान गया-धन गया, बल गया, राज गया, मनुष्यत्व भी गया ? इसका कारण खोजना होगा। हमारी नस्ल क्यों गिर रही है ? पुरुष को पैदा करने की शक्ति हम में से क्यों नष्ट हो गई ? क्या हम मनुष्य ! आदर्श मनुष्य ! संसार का सर्वोच्च मनुष्य पैदा नहीं कर सकते ? अवश्य कर सकते हैं—यदि हम चाहें। दुःख की बात है हमारी रुचि ही इस ओर नहीं है। भारत में ऐसे कितने पिता हैं जिन्होंने सन्तान उत्पन्न करना सीखा है। और कितने ऐसे स्त्री पुरुष हैं जो सन्तान के लिये ही सहवास करते हैं ? अवश्य ही इसके उत्तर में हमें शून्य (०) मिलेगा। यह क्या राम और भीष्म की सन्तान के लिये भयानक बात नहीं है। हमारे पितृ गण हमारी इस पशुता पर हमें जितना श्राप दें उतनाही थोड़ा है। इस प्राकृतिक नियम की अवहेलना के दण्ड में हमें निर्वंश और कीड़े मकोड़ों से भी नीचा हो जाना चाहिये ?

अध्याय दूसरा

——:०:——

पुत्र रत्न कैसे उत्पन्न किया जा सकता है

—:X:—

आज संसार भर में सन्तान निरोधका सिद्धान्त ज़ोर शोर से चल रहा है। परन्तु मेरा यह कहना है कि इसकी अपेक्षा उत्तम सन्तान पैदा करना अच्छा है। क्योंकि उत्तम सन्तान की जितनी ही वृद्धि होगी उतनी ही अधम सन्तान की कमी हो जायगी। जो जाति जितने अधिक सर्वोत्तम पुत्र उत्पन्न कर सकती है वह उतनी ही शीघ्र उन्नति कर सकेगी। इस सम्बन्ध में जर्मनी और फ्राँस के उदाहरण हमारे सन्मुख है। जर्मनी ने गत ६० वर्षों से इस बात की भरपूर चेष्टा की है कि वह उत्तम

पुत्र पैदा करे- इसके विरुद्ध फ्रांस ने जनसंख्या को सीमाबद्ध करने की चेष्टा की है। अब यह प्रकट है कि जर्मन राष्ट्र और फ्रांस के राष्ट्र में कितना अन्तर है। यद्यपि गत महा-युद्ध में जर्मनी ने भयानक क्षति उठाई है। परन्तु जर्मन राष्ट्र फिर भी एक बार उन्नत होगा इस में तनिक भी सन्देह नहीं।

एक चीनी विद्वान् का कथन है 'कि जो राष्ट्र अधम पुत्र उत्पन्न करेगा, उसे विदेशी राक्षस भक्षण कर जावेंगे' यह बहुत ही सत्य है!

प्राचीन आर्यों ने अपनी सन्तति को उत्कृष्ट बनाने की बहुत ही चेष्टा की थी, उन्होंने इसके लिये बहुत से सामाजिक बन्धन और धार्मिक नियम बनाये थे। इसीका कारण है कि संसार की अनेक जातियाँ शताब्दियों तक पृथ्वी पर ज़ोर से उठीं और अन्त में नष्ट हुईं। और अब उनके अस्तित्व का पता उनकी क़ब्रों या पृथ्वी के उदर में छिपे पदार्थों से मिलता है। परन्तु भारत ने अपनी जातीयता को इस प्रबल चक्र में पिसकर भी सुरक्षित रखा।

आधुनिक वैज्ञानिकों ने 'पुत्र' विज्ञान पर जो गम्भीर गवेषणा की है। उसे आज हम भूल गये हैं। उन्होंने जीवन विद्या, नर विद्या, शरीर रचना विद्या, मानस-

शास्त्र, समाज शास्त्र और आचार शास्त्र आदि को एकत्र कर 'पुत्र' विज्ञान की सृष्टि की है।

यह बात तो हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि प्रकृति एक ऐसी अटल सामर्थ्यवान् सत्ता है कि जिसके नियमों का उल्लंघन किसी भी प्राणी के लिये असम्भव है। सूरज, चांद, हवा, प्रकाश, नक्षत्र, आकाश, पंचतत्व सभी अपना कार्य अबाध रूप से कर रहे हैं। जो अमोघ शक्ति इन अतर्क्य नियमों के पीछे काम कर रही है। वही ईश्वरीय शक्ति है। इन्हीं दो शक्तियों से प्राकृत और ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करना और उनके आधार पर चलना ही प्राणी के लिये श्रेयस्कर है, खासकर मनुष्य के लिये, जो पृथ्वी का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। और पृथ्वी की सब सम्पदाओं का स्वामी है। ज्यों २ मनुष्य की बुद्धि का विकास होता जाता है—वह इन दुरूह नियमों के भेदों को जानता जाता है। और ज्यों २ ये रहस्य मनुष्य पर प्रकट होते जाते हैं। त्यों २ मनुष्य की विशेषता बढ़ती जाती है। और वह संसार में महत्व-पूर्ण और समर्थ व्यक्ति समझा जाता है। मनुष्य जाति की भलाई के लिये इन नियमों का जान लेना बहुत ही लाभदायक है। जो जातियाँ इस भेद से अज्ञात हैं अन्धेरे

में हैं। जिन्होंने इन नियमों को जान लिया है। वे संसार में उन्नत हैं।

पुत्र उत्पादन के लिये माता का गर्भस्थान प्रकृति की एक उत्तम प्रयोगशाला है। बालक रूपी पुतला माता के इसी सांचे में ढाला जाता है। उस के लिये जैसे उत्तम, मध्यम, अधम मसाले का व्यवहार होता है, वैसा ही यह पुतला तैयार होता है। इस निर्माण पर ४ बातों का ख़ास प्रभाव पड़ता है। प्राकृत रहस्य, संस्कार, आत्मशक्ति और शिक्षा।

प्रकृति ने स्त्री और पुरुष को दो विपरीत जीवित शक्तियों से परिपूर्ण बनाया है। पुरुष पुष्ट, साहसी, मज़-बूत, क़द्दावर, बालों और डाढ़ी मूँछों से परिपूर्ण है और स्त्री कोमल, दयालु, लज्जा और भय से परिपूर्ण लोमरहित। एक में प्रदान है। दूसरे में आदान। दोनों एक सम्पूर्ण सत्व के आधे २ भाग हैं। इनकी सृष्टि के मध्यम में प्रेम और आनन्द के आदान प्रदान का माध्यम सबसे महत्वपूर्ण है। प्रेम और आनन्द का आदान प्रदान ही पुत्रोत्पादन कला की जान है।

प्रकृति असंख्य प्राणिवर्ग की परम्परा को स्थाई रखने के पूर्ण यत्न करती है। एक वटवृक्ष के उत्पन्न करने को

करोड़ों बीज उत्पन्न किये जाते हैं। उनमें एकाध ही बीज का वृक्ष बनता है। एक बार सहवास होने पर ४ करोड़ रेंगने वाले जन्तु वीर्य के साथ बाहर आते हैं, उनमें से एक जन्तु को डिम्ब ग्रहण करके गर्भाशय में पोषित करता है कालान्तर में वही पुत्र बनता है।

मानव जाति के विस्तार और अस्तित्व के लिये प्रेम के भिन्न २ विभाग कर दिये गये हैं। जो मनुष्य की स्थिति विकास में सहायता देते हैं। किन्तु इन सबों से उत्कृष्ट प्रेम तो दम्पति का प्रेम है, वास्तव में यही प्रधान प्रेम है। यह प्रेम स्त्री और पुरुष दोनों की काया पलट देता है। उनके स्वभाव और आचरणों में, जीवन में परिवर्तन कर देता है।

प्रकृति के इस जादू से स्त्री पुरुष कहाँ तक प्रभावित होते हैं, यह यहाँ हमारे वर्णन का विषय नहीं। परन्तु इस में सन्देह नहीं कि पृथ्वी में ऐसा कोई स्वार्थ नहीं। जिसे पुरुष स्त्री के लिये तथा स्त्री पुरुष के लिये न त्याग सके। दम्पति का संगठन इसी प्रेम के आधार पर है जिस का शुभ परिणाम 'पुत्र' है।

यद्यपि एक व्यक्ति से प्रेम होने पर दूसरे से नहीं होना चाहिये। परन्तु यदि हठात् एक व्यक्ति का वियोग हो

जाय तो? प्रकृति की वंशवृद्धि की धारा रुक जावेगी। इसलिये प्रकृति ने प्रेम की बहुत सी धाराएँ बढ़ा दी हैं। और एक ही व्यक्ति को बहुत सी स्त्रियों व पुरुषों से प्रेम करने की शक्ति भी प्रदान की है।

सौन्दर्य और गुण इस प्रेम को सिंचन करते हैं। हमारा हृदय प्रकृति के संकेतों से चलायमान हुआ करता है।

हाँ तो वंश वृद्धि कार्य को निर्बाधता से चलाते रहने के लिये, एक के वियुक्त होने पर या मर जाने पर दूसरे से संयुक्त हो जावे के मूल में एक के बदले सैकड़ों व्यक्तियों को प्यार करने की भावना प्राणी को दी गई है। परन्तु मनुष्य मानसिक शक्ति के द्वारा इस प्राकृत चंचलता को संयम में रखता और मर्यादा तथा कर्तव्य के नाते प्रेम भावना को अपनी ही पत्नि या पति में नियुक्त रखता है। और जब २ अनधिकार व्यक्तियों की ओर उसका मन जाता है। वह विवेक से उसे संयमित करता है यही वह रहस्य मय अनंग का वशीकरण खेल है जो युवा युवतियों में व्याप्त है और जिसके मूल में सुन्दर पुत्र का अस्तित्व छिपा है।

आनन्द की ओर मनुष्य स्वयं आकृष्ट होता है। यह उसकी प्रकृति है। फिर वह आनन्द चाहे क्षणिक हो या

स्थाई। इसलिये प्रकृति ने इस वस्तु में लोकोत्तर आनन्द को आदान प्रदान करने की शक्ति उत्पन्न करदी है। डा० फाउलर का कथन है कि प्रेम अपने प्रेम पात्रों का रूप गुण उत्पन्न करता है। इसका अर्थ यह है कि दम्पति परस्पर यह चाहते हैं कि वे अपने पति पत्नी के रूप गुण का ठीक अनुकरण अपने पुत्र में देखें। गरज-यौवन, सौन्दर्य और गुण से प्रकृति स्त्री और पुरुषों को एक दूसरे की ओर आकृष्ट करके प्रेम में लीन कर देती है और फिर उन्हें आनन्द के प्रलो-भन में विभक्त करके और ठीक परस्पर की छवि के अनु-करण की लालसा उत्पन्न करके ऐसे पुत्र के उत्पादन के लिए विवश करती है, जिसे पीढी दर पीढी तक वह नस्ल वैसी ही बनी रहेगी।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि उत्तम सन्तति तब तक नहीं उत्पन्न हो सकती जब तक दम्पति में उत्कट प्रेम, वासना, उमंग, आनन्द और उत्साह न हो। उत्तम स्थिति में ही उत्तम संतान उत्पन्न होती हैं। गर्भधान के समय दम्पति की जो मनो वृत्ति होती है। उसका गर्भ पर स्थिर प्रभाव पड़ता है।

आत्मिक तथा जातीय प्रवाह द्वारा उत्पन्न हुए मनुष्य का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में जो परस्पर सिल सिला

बना रहता है, उसी का नाम वंश परम्परा है, अर्थात् उत्तरोत्तर गुणोंयुक्त ही मनुष्यों का अवतरण कुल प्रवाह के नाम से प्रख्यात है।

मनुष्य शरीर के वह परमाणु जो अपने सदृश आकृति को दूसरे शरीर में धारण करते हैं, वही उत्तरोत्तर पीढ़ी दर पीढ़ी बच्चों में उतरते और प्रगट होते रहते हैं। इसी शक्ति के अनुसार बच्चों में वंश परम्परा से दोष या गुण उतरते हैं, जैसे—आँख की रङ्गत, बाल, चमड़ा, कद वजन, गाने बजाने में, चित्रकारी में, साहित्य में, गणित में या स्मरण शक्ति में विशेषता, शारीरिक, तथा मानसिक, एवं हार्दिक बल, बोलने, सुनने, देखने में अन्तर, पैतृक नशेबाजी तथा कुरीतियों की ओर झुकाव, पैतृक रोग, क्षय, मृगी, उपदंश आदि, स्वाभाविक ही उनमें प्रगट हो जाया करते हैं। इससे जिनके माता पिता जिन २ रोगों में ग्रसित होते रहे हों उनके पुत्र भी उस व्यवस्था के अनुसार उसी रोग से ग्रसित होते रहते हैं। या उक्त प्रकार से-गुणों से भरपूर हो जाते हैं। अक्सर देखा गया है कि मनुष्य केवल अपने माता पिता ही से उत्पन्न नहीं हुआ करता। किन्तु जिस बीज से बच्चे की उत्पत्ति होती है, उसमें उसके पूर्वज वंश-धरों का अंश भी होता है, जैसे कई पुत्र माता पिता से

उत्कृष्ट गुण वाले हो जाते हैं—उनमें उनके पितामह, पितामही, एवं नाना, नानी, आदि से गुण या अवगुण का चौथाई अंश अवश्य ही आता रहता है। जिससे उस सन्तान पर वही प्रभाव प्रगट हुआ करता है।

सन्तान में माता के गुणों का अधिकांश होता है, अतः यह निश्चय है कि सन्तान माता के गुणों से ही अधिक अलंकृत होतीहै,पर इससे यह नहीं समझना चाहिये कि पैतृक गुण उसमें आये ही नहीं, किन्तु उनका विशेष आविर्भाव नहीं हुआ। ठीक इस रीति से किसी सन्तान में पैतृक गुणों की, किसी में मातृक गुणों की अधिकता पाई जाती है, एक की प्रधानता में दूसरा गौण हो जाता है।

अतएव यदि संतति का सुधार चाहते हो तो प्राकृतिक नियमों का ज्ञान, तदनुसरण करने या कराते रहने से कई पीढ़ियों के अनन्तर सब दोष नष्ट होकर सद्गुणों ही का प्रादुर्भाव हुआ करेगा। उनके प्रभाव से भावी सन्तान को कष्ट न भोगना पड़ेगा। एवं भारत जनता को पवित्र कर माता का सिर ऊंचा करना या उसे रसातल के गढे में गिराना, ये दोनों कार्य हमारे हाथ में हैं। अतः बुद्धिमान् मनुष्य स्वयं विचारकर उस मार्ग पर चलें जो श्रेष्ठ स्थान पर पहुंचादे।

गाल्टन साहेब ने खोज की है कि सामान्यतः बच्चे की शरीर रचना का आधा भाग तो माता पिता दोनों मिलकर पूर्ण करते हैं। बाकी आधा पूर्व पुरुषों से या वंश परंपरा से आता है। जिसका ब्यौरा इस प्रकार है—माता पिता से प्राप्त गुण अवगुण का आधा अंश, अर्थात् प्रथक् चौथाई चौथाई अंश, इसी भाँति पितामह, पितामही, माता मह, पितामही इन चारों का चौथाई अंश, या प्रत्येक का सोलहवाँ अंश। इसी प्रकार आगे भी गुण अवगुणों का सिलसिला चलता है। यह इस प्रकार हुआ—

माता पिता से प्राप्त हुआ स्वभाव	१/२ अंश
दादा अथवा दादी से प्राप्त स्वभाव	१/४ अंश
नाना अथवा नानी ,, ,,	१/८ अंश
परदादा और पर दादी ,, ,,	१/१६ अंश
परनाना और परनानी ,, ,,	१/३२ अंश

इस हिसाब में महत्व यह है कि प्रत्येक अंक पिछले अंकों के जोड़ के बराबर होता है। जैसे—

$\frac{१}{२} = \frac{१}{४} + \frac{१}{८} + \frac{१}{१६} + \frac{१}{३२} + \frac{१}{६४}$ आदि

$\frac{१}{४} = \frac{१}{८} + \frac{१}{१६} + \frac{१}{३२} + \frac{१}{६४} + \frac{१}{२२८}$,,

$\frac{१}{८} = \frac{१}{१६} + \frac{१}{३२} + \frac{१}{६४} + \frac{१}{१२८}$,, ,,

इसी भाँति दूर तक हिसाब चला जायगा।

गाल्टन द्वारा निर्धारित यह व्यवस्था बहुत कुछ अनुमानिक है। परन्तु दाय में यह बिल्कुल ठीक बैठती है। यह निश्चित दाय कहाता है। इसके सिवा दो दाय और भी हैं एक—व्यावर्तक दूसरा—विलक्षण।

व्यावर्तक दाय में कभी मातृक और कभी पैतृक गुणों का लोप सा पाया जाता है। संतति में माता ही के गुणों का अधिकावेश होता है। इसका कारण ऐसा प्रतीत होता है कि संतान में माता का ही अंश अधिक है। पर इसका यह अर्थ नहीं कि उसमें पैतृक अंश है ही नहीं।

निर्दिष्ट या विलक्षण दाय में किसी विशेष गुण का विकास होता है जो न तो पूर्णतया पैतृक ही कहा जा सकता है और न मातृक ही। जैसे घोड़े गधे से खच्चर। इस अवस्था में कभी २ पुत्र में माता पिता से विलक्षण गुण पाये जाते थे। पर खोज से पता लगता है कि वे उसके किसी पूर्व पुरुष में अवश्य ही थे। विज्ञान वेत्ताओं का मत है कि इसका कारण यह है कि बहुधा गुण पीढ़ियों तक छिपे पड़े रहते हैं। और किसी प्राकृत कारण से वे विकसित नहीं हो पाते।
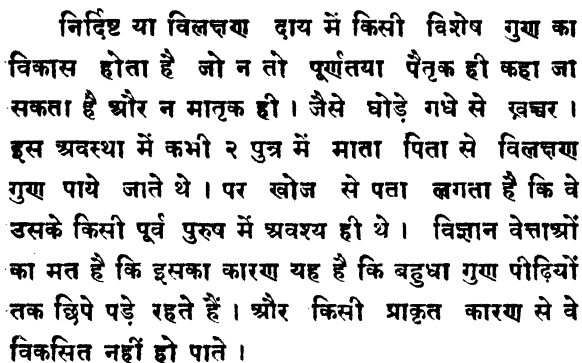
डा० डावेन्पोर्ट ने वंश परंपरा से आने वाले ४१ गुणों की गणना की है। आँख की रंगत, बाल, चमड़ा, कद, वज़न, सँगीत, चित्रकला, साहित्य, गणित, स्मरण शक्ति, शरीर बल, भाषण, श्रवण, दृष्टि, स्वभाव, नशा, अपराध, रोग, क्षय, मृगी आदि।

लंदन से ऐसी कुछ पुस्तकाऐं प्रकाशित हुईं थीं, जिनमें अनेक परिवारों के वंशजों का ब्यौरा दिया गया था। उसमें नकशों के ज़रिये इस बात को स्पष्ट करने की चेष्टा की गई थी कि गुणों अवगुणों, तथा रोग आदि से वंश परंपरा का कितना घनिष्ट सम्बन्ध है। और ये गुण दोष पीढ़ी दर पीढ़ी चलकर भी नष्ट नहीं होते। इससे

यह प्रमाणित होता है कि सन्तान माता से ही नहीं प्रत्युत् उस बीज से उत्पन्न होती है, जिसमें पूर्व वंश-धरों का भी भाग रहता है।

मनु ने और अन्य आचारशास्त्रियों ने माता के असपिण्ड और पिता के अगोत्र कुल में व्याहने का विधान किया है। तथा कुल, गोत्र, प्रवर, शाखा, आदि सात बातों का विभक्तीकरण है। और विवाह शादियों में इन सब बातों को जो देखने भालने का विवेचन किया गया है। विधान शास्त्रों में लिखा है—

जो स्त्री माता की ६ पीढ़ी और पिता के गोत्र की न हो वही विद्वानों के लिए विवाह ने योग्य है। आगे दश कुल बताये हैं जिनमें विवाह नहीं करना चाहिए— वे ये हैं—

१—जिस कुल में उत्तम क्रिया न हो।
२—जिस कुल में कोई उत्तम पुरुष न हो।
३—जिस कुल में कोई विद्वान् न हो।
४—जिस कुल में शरीर पर बड़े २ लोम हों।
५—जिस कुल में बवासीर का रोग हो।
६—जिस कुल में क्षय (यक्ष्मा) दिक्र का रोग हो।

७—जिस कुल में ग्रहणी आदि रोग हो।

८—जिस कुल में मृगी की बीमारी हो।

९—जिस कुल में श्वेतकुष्ठ का रोग हो।

१०—जिस कुल में गलित कुष्ठ का रोग हो।

निम्न वर्णित कन्या से विवाह न करे—
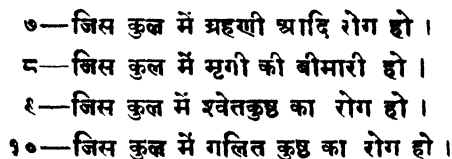
१—पीले वर्ण वाली।

२—अधिक अंग वाली, जैसे छै अँगुली की।

३—जिसके शरीर पर बिल्कुल रोम न हों।

४—जिसके शरीर पर बड़े २ रोम हों।

५—व्यर्थ अधिक बोलने वाली।

६—खँजे [बिल्ली जैसे] नेत्रों वाली।

७—नक्षत्र नाम वाली—जैसे रोहिणी आदि।

८—नदी नाम वाली—जैसे गङ्गा आदि।

९—पर्वत नाम वाली जैसे—विन्ध्याचला आदि।

१०—पक्षी नाम वाली—जैसे मैना, हंसा आदि।

११—सर्प के नाम वाली—जैसे नागनी, उरगा आदि।

१२—प्रेष्य नाम वाली—जैसे दासी आदि।

१३—भयानक नाम वाली-जैसे कालिका, चण्डिका आदि।

कैसी कन्या से विवाह करे—

१–सुन्दर नामवाली, जैसे–मधुश्रवा, यशोदा, सौभाग्यवती।
२–हंस और हाथी के समान धीरे और सलज्ज चलनेवाली।
३–सूक्ष्म लोम, सूक्ष्म केश, सूक्ष्म दाँत वाली।
४ मधुर भाषण और मृदु अंग वाली।
५–जो पिता के गोत्र तथा माता की पीढ़ी में न हो।

संसार में केवल मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो हर समय कुछ न कुछ विचारा करता है। उसके छोटे से छोटे और बड़े से बड़े कार्यों का मूल विचार ही है। प्रथम मन की शक्ति चलायमान होती है फिर दूसरे अंग इस शक्ति की आज्ञा पर कार्य करते हैं। इस शक्ति की सहायता के बिना कुछ नहीं हो सकता।

इन विचारों का कम्पन आकाश में आन्दोलन उत्पन्न करता है। जैसे तालाब में एक छोटा सा कंकड़ फेंक देने से उसमें एक लहर उत्पन्न होती है उसी प्रकार विचार की लहर समस्त वातावरण में कम्पन उत्पन्न कर देती है।

'ईथर' एक तत्व है जो आकाश के स्थानापन्न है। इसमें और वायु मण्डल में एक सैकिंड में ५० हज़ार तक कम्पन उत्पन्न हो सकते हैं। जिन में ४।५ हज़ार तक की संख्या को मनुष्य सुन सकता है। ईथर के परमाणु इतने सूक्ष्म है कि सोने जैसे घन द्रव्य के एक परमाणु में ईथर

के लाखों परमाणु हैं। प्रत्येक विचार जो मास्तिष्क में उत्पन्न होते हैं 'ईथर' पर प्रभाव डालते हैं, इस प्रकार ईथर पर हमारे विचार अंकित हो जाते हैं। जर्मनी के एक डाक्टर ने तो उनके चित्र तक लिये हैं। सुनते हैं कि एक बार एक युवक अपनी प्रेमिका के विचार में मग्न था कि उक्त डाक्टर ने ईथर से उस कल्पित प्रेमिका का चित्र उतार लिया। स्मरण रखने योग्य बात यह है कि जल में उठी लहरें शीघ्र नष्ट हो जाती हैं परन्तु ईश्वर में उत्पन्न हुआ कम्पन अमर रह जाता है। यही सत्य सिद्धान्त है जो गर्भस्थ शिशु पर माता पिता के विचारों का प्रभाव डालता है। यही वह गम्भीर सत्य हैं जिसके आधार पर अर्जुन पुत्र अभिमन्यु ने गर्भ ही में चक्र व्यूह में प्रवेश करना सीख लिया था—क्योंकि एक बार अर्जुन ने सुभद्रा से उस समय यह भेद कहा था जबकि अभिमन्यु गर्भ में था। इस लिये स्मरण रखना चाहिये कि गर्भाधान के समय से लेकर प्रसव तक माता के प्रत्येक विचार की छाप बच्चे पर पड़ेगी। और वह उसी आकृति, रूप रङ्ग, स्वभाव, योग्यता, शरीर सम्पत्ति वाला उत्पन्न होता है जैसे विचार उसे प्राप्त होते हैं।

प्राणी शास्त्र के अध्ययन करने से हमको पता लगेगा कि प्राणियों का आकार और स्वभाव उनकी इच्छा और

आवश्यकता के अनुसार विकसित हुआ तथा बना है। उनके किसी अंग या अवयव का विकसित होना या लोप हो जाना उनकी मनः शक्ति पर निर्भर है। सिंह की विकराल मूर्ति उसके उग्र स्वभाव के कारण और गौ की शान्त मूर्ति उसके शान्त जीवन के कारण है। एक जानवर जो पालतू है उसमें और उसी जाति के जंगली जानवर में बहुत अन्तर होता है। पालतू जानवरों का स्वभाव शान्त और जंगलियों का उग्र होता है। अनेक रेंगने वाले जीवों ने सैकड़ों हज़ारों वर्ष तक पैरों की इच्छा उत्पन्न करके पैर पैदा कर लिये, मछलियों ने पर उत्पन्न कर लिये, कीड़ों ने भाँति २ के रंग और रूप उत्पन्न कर लिये। लता और पुष्पों में भी विचित्र वर्णन हो गये। यह सब मानसिक शक्ति का प्रभाव है।

इन बातों से आप समझ सकते हैं कि मानसिक शक्ति बच्चे के विकास में कितनी सहायक है। वीरवर नेपोलियन जब गर्भ में था तब उसकी माता ने प्लूटार्क सचेत वीर पुरुषों के जीवन पढ़े थे। वह तेज घोड़े पर सवारी किया करती थी। और अपने पति के आधीन सैनिकों पर रानी की भाँति हुक्म चलाया करती थी। उस मानसिक शक्ति

का विकास ही था कि उसे नेपौलियन जैसा वीर पुत्र प्राप्त हुआ।

'चार्ल्स, और 'किंग्सले, जब गर्भ में थे तब उनकी माताओं ने अपना मन वैराग्य की ओर फेरा था। और वह विरक्त की भाँति नगर का जीवन छोड़ ग्राम में रहती थी। और सृष्टि सौन्दर्य में मन लगाती थी। यह काम उसने अपने गर्भस्थ शिशु पर प्रभाव डालने के लिये जान बूझ कर किया था। फल स्वरूप किंग्सले महान् धर्माध्यक्ष और सृष्टि सौन्दर्य पर प्रबल लेखक हुआ।

श्री कृष्ण और रुकमिणी के प्रेम का ही यह फल था कि उनके पुत्र प्रद्युम्न और कृष्ण में बाल बराबर भी अन्तर न था। वे इस प्रकार कृष्ण से मिलते थे कि स्वयं कृष्ण को भी सन्देह होने लगा था कि क्या यह मैं ही हूँ। कृष्ण का रूप ही नहीं गुण भी पूर्णतया प्रद्युम्न में थे।

एक अमेरिकन दम्पति ने एक सुन्दर बालक का चित्र ख़रीदा और जब स्त्री गर्भ वती हुई वह बहुधा उसे देखा करती थी। बालक उसी की आकृति पर हुआ।

एक अंग्रेज़ एक हबशी स्त्री से प्रेम करता था। यह स्त्री मर गई तब उसने गोरी स्त्री से विवाह किया। उससे जो पुत्र उत्पन्न हुआ, वह हबशी स्त्री के समान था। इसका

कारण यह था कि गर्भाधान की क्रिया के समय उसी हवशी स्त्री का विचार उसके मस्तिष्क में था। रोम का एक न्यायाधीश बहुत ही बदसूरत था, इसका प्रथम पुत्र भी ऐसा ही हुआ। न्यायाधीश सुन्दर पुत्र चाहता था, अतः उसने उस समय के विख्यात डा० गैलन की सम्मति ली। तथा उसने उसकी स्त्री के सोने के कमरे में एक सुन्दर बालक की तस्वीर बनवा कर टंगवादी। इस बार जो बच्चा हुआ वह आशातीत सुन्दर था।

एक स्त्री बच्चे को सोने के लिये अफीम खिला कर कहीं चली गई थी। पर अफीम की मात्रा बढ़ जाने से बच्चा मर गया। स्त्री को अत्यन्त रंज हुआ। उसी दशा में उसे फिर गर्भ रह गया। परिणाम यह हुआ कि जो बच्चा हुआ। वह रोगी और कमज़ोर था। उसे जन्म से ही मस्तिष्क विकार था, दो वर्ष रोगी रह कर वह मर गया।

महासती मन्दालसा ने किस भाँति इच्छित पुत्र उत्पन्न किये थे यह भी सब पर प्रकट है।

अध्याय तीसरा

——:●:——

शिक्षा का दृष्टि कोण

——:✿✿:——

एक बार मैं अपने एक सम्मान्य मित्र के साथ जंगल की हवा खाने गया। सुन्दर हरी भरी पहाड़ियों के बीच में एक हरियाले मैदान पर स्वच्छ जल की कुदरती छोटी सी झील थी। सोने की तरह दोपहर की सूर्य किरणों में उसका जल चमक रहा था। उस झील के ठीक बीचों बीच पानी के ऊपर एक ठेक निकल आई थी। उस पर बहुत ही सुन्दर सफेद रंग के कई जल पक्षी बड़ी सुन्दर पंक्ति में बैठे चहक रहे थे। उन्हें देख कर मेरे बुजुर्ग मित्र ने कहा—"अहा? देखो ये सुन्दर पक्षी एक पँक्ति में इकट्ठे बैठे

कैसे सुन्दर मालूम देते हैं। मैंने उन पर एक चाह की दृष्टि डाली और फिर मित्र की तरफ़ तीव्र दृष्टि से देखकर कहा—

"यह इनका सौभाग्य है कि ये अँग्रेजी पढ़े लिखे नहीं हैं, नहीं तो आज इनमें यह एकत्र होने की सुन्दरता न होती। इनमें से एक उस पहाड़ी की टेकरी पर बैठा चोंच रगड़ता होता, दूसरा उस वृक्ष के ठूठ पर झख मारता। तीसरा वहाँ जँगल में भटकता, चौथा इधर उधर सिर्फ पेट भरने को फिरता होता। ये लोग अपनी २ बैठने की जगह में हद बनाते। उनके लिए लड़ते, मरते, इज्जत का ख्याल करते, अदब कायदे से बैठते।"

मेरे मित्र मेरी बात पर हँसने लगे। वे सैर करने आये थे। बहस करने नहीं, पर उन पक्षियों की वह सुन्दरता मेरी नजर से नहीं उतरती है। मैं अकसर जब पढ़े लिखे युवकों को पीला गात, सूखा निस्तेज मुँह, गढ़े में धसी आँखें, पिचके गाल, गद् गद् वाणी,, और काँपते हाथों से जिस तिस के दर्वाजे पर अपनी योग्यता की खुर्चन का बण्डल जेब में भरे भटकता देखता हूँ। फटकार खाते, और निकम्मे, अनावश्यक और नालायक बन कर धक्का खाते देखता हूँ। तो वे पक्षी मेरी आँखों में

तस्वीर बन जाते हैं। क्या मनुष्य के ही भाग्य फूटने को थे? क्या यह अपमान—तिरस्कार और कड़वे जीवन का शाप मनुष्य के बच्चों पर ही पड़ने को था। मेरी छाती जल जाती है—मैं बेचैन हो जाता हूँ।

एक दिन मेरे पूज्य पिता जी कहने लगे—न जाने संसार किस तरफ जारहा है। और इसका क्या होना है। प्रत्येक पीढ़ी की नस्ल गिर रही है। अब से ५०-६० वर्ष प्रथम ही प्रत्येक पुरुष पूरा कद्दावर, पुष्ट, निरोग और परिश्रमी था। प्रत्येक के चार चार, छः छः लक्कड़ के समान बेटे होते थे। कोई निपूता नहीं था, एक जवान जब लकड़ी पकड़ता था, तब पचासों की मण्डली को भारी हो जाता था। दिन पर दिन लोग बिना सन्तान के हो रहे हैं। सन्तान होती भी हैं। तो मरी, गिरी, रोगी, दुर्बल, अपाहिज, और बेदम,—उन्हें वे स्कूल के मुर्गीखाने में पिटने और गालियाँ खाने को भेज देते हैं। बेचारे फूल से बच्चे आँसू पीते हैं, गम खाते हैं, थर थर काँप कर दिन काटते हैं। ऐसी भी क्या आफ़त है, यह पढ़ाई क्या कुल का उद्धार करेगी, हमने तो इसमें वही मसल देखी कि—"सारी रात रोए एक हो मरा।"

अनेकों वार अपने बचपन मैंने पिता जी की जवानी

की बातें सुनी हैं। जिन्हें वे सदा अपने मित्रों से कहा करते थे। धीरे २ मैं उनका सार जान रहा हूँ, मैं अपनी आयु के और उनसे पीछे के जवानों को देखता हूँ। तो थक कर रह जाता हूँ। मानो मर्दानगी इन से रूठ गई है। उत्फुल्लता मर गई है, उठाव मसल डाला गया है। मुर्दे, कमज़ोर, रोगी और टूटे हुए ये नौजवान घर घर में पड़े टुकड़े तोड़ रहे हैं।

सारे संसार की सभ्य जातियाँ इस बात पर एक मत हैं कि बच्चे माता पिता की सम्पत्ति नहीं हैं वे समाज की सम्पत्ति हैं। समाज को जब जब जितने और जैसे बच्चों की आवश्यकता हुई तब तब वैसे ही उत्पन्न करने को उसने सर्वसाधारण को उत्तेजन और सहायता दी। निकम्मे –दब्बू और डरपोक तथा अल्पायु बच्चों को समाज ने कभी जीवित नहीं रहने दिया। जो देश सुखी समृद्धशाली होगा, उसकी जनसंख्या बढ़नी सम्भव ही है, पर जनसंख्या की निस्सीम वृद्धि से जो समाज पर आपत्तियाँ आती हैं, उसे रोकना भी बुद्धिमानी का काम है। प्राचीन काल में भारत के सहयोगी ग्रीस देश के नेता क्रीट, सोलन, प्लेटो, और अरस्तु, आदि को— बच्चों की उत्पत्ति समाज की मुट्ठी में रहे और निस्सीम

जनवृद्धि न होने पावे—इस सम्बन्ध में चेष्टा करनी पड़ी थी।

प्लेटो ने स्वतन्त्र राज्यों की स्वतन्त्र प्रजा के मनुष्यों की, और निवास स्थानों की संख्या ५०४० निर्णीत की थी। इस संख्या में कमो बेशी न होने पावे यह प्रबन्ध करना उस राज्य के मजिस्ट्रेट का काम था। पिता के यदि एक से अधिक पुत्र हों तो वह उन्हें बिना पुत्र वालों को दे डाले—और पुत्री को ब्याह में दान देकर अपने एक पुत्र को ही समस्त सम्पत्ति का स्वामी बनावे। इस तरह पिता की मृत्यु के पीछे उस कुटुम्ब में एक ही पुरुष रह जायगा—और स्वतन्त्र प्रजा की संख्या समान स्थिर रहेगी।

मजिस्ट्रेट की आज्ञा के विरुद्ध विवाह करना, अधिक सन्तानोत्पत्ति करना, निर्धारित आयु के पूर्व या पश्चात् सन्तान उत्पन्न करना, राजाज्ञा के विपरीत चलना समझा जाता था और उन्हें दण्ड देने की व्यवस्था थी।

मजिस्ट्रेट की आज्ञा से सर्वोत्तम प्रजा की सन्तति शहर के बाहर उन दाईयों के पास भेज दी जाती थी जो इसी कार्य के लिये नियत थीं—और आज्ञा विरुद्ध विवाह करने वालों की-अयोग्य, रोगग्रसित स्त्री पुरुषों की अथवा अधिक

सन्तान पैदा करने वालों की सन्तति के लिये मजिस्ट्रेट की कठोर आज्ञा थी कि वे ज़िन्दा ही किसी सुन सान जंगल में ज़मीन में गाढ़ दिये जाँय।

प्राचीन आर्ष पद्धति भी कुछ ऐसी थी। उस समय भी सन्तान पर माता पिता का स्वत्व नहीं था। उस समय ज्यों ही बालक समर्थ हो जाता था-त्योंही माता पिता उसे उपनयन करके गुरुकुल को सोंप दिया करते थे—जो कि देश भर के सब प्रकार के चुने हुए वीतराग महात्माओं का निवास होता था—वहाँ वे महापुरुष उसकी रुचि, प्रारब्ध, शरीर सम्पत्ति, जीवन, बल—आदि का सूक्ष्म वैज्ञानिक परिशोध करके उसी के अनुकूल शिक्षा देते और अन्त में उसकी परिपक्व अवस्था में उसके गुण कर्मों की जाँच की जाती और अपने मन बचन कर्म की संघशक्ति को वह जिस प्रकार समाज सेवा में लगाने योग्य होता—उसी योग्य श्रेणी (वर्ण) में उसे प्रवेश करा दिया जाता था। सामाजिक सुन्दरता और प्रेम बनाये रखने के लिये यह कैसी सुन्दर रीति थी। राजा और रंक प्रत्येक का बालक गुरुकुल बिना जाऐ नहीं रह सकता था—और सब को अपना कुलगौरव त्यागकर भ्रातृ भाव से विनीत होकर गुरु सेवा और भिक्षा द्वारा विद्योपार्जन करना पड़ा करता था।

आज कितने अनाथ बालक बालिकायें गली गली भिक्षा माँगते फिरते हैं। और उन्हें घर की देवियां और दुकान के देवता किस प्रकार कुत्तों की तरह दुदुराया करते हैं—और उनके सुन्दर सुन्दर नौनिहाल किस प्रकार मलाई खाकर झूंठा दौना उनकी ओर फैंक कर एकाध लात और एकाध दुर्वाक्य ठोक देते हैं। उस समय यह राक्षसी दृश्य नहीं था। ज्योंही किसी बालकने-प्रिय मधुर स्वर से द्वार पर आकर पुकारा "माता भिक्षा" तो प्रत्येक गृहणी की छाती में दूध उमण्ड आता था- उसे तुरन्त स्मर्ण होता था- उसका लड़का भी कहीं इसी प्रकार किसी द्वार पर किसी को "माता भिक्षा" कह रहा होगा-वह दौड़ कर अपने ही पुत्र की तरह उसे स्नेह करती और घर में जो कुछ होता उसकी गोद में डाल कर पुचकारती थी। आह! कैसी स्वर्गीय जातीयता थी, क्या ही प्यारा संगठन था; कहाँ गया वह काल और कहाँ गया वह क्रम !!!

सम्पदा विहारी कृष्ण और दरिद्र मूर्ति सुदामा की वह अलौकिक मित्रता क्या गुरुकुल प्रणाली बिना संभव हो सकती है?

किन्तु वह सब क्रम बिगड़ गया। मनुष्य ने संसार में जन्म लेकर संसार का खाया है संसार का वह ऋणी है—

अपना प्रतिनिधि स्वरूप योग्य पुत्र संसार की सेवा को देकर वह उऋण होता है-यही पुत्र शब्द का अर्थ भी है—परित्राण करने वाला-उद्धार करने वाला-पुत्र होता है। इसी लिये सन्तान को पैदा किया जाता है। पुत्र को उत्पन्न करना और यथा शक्य योग्य बनाकर गुरुकुल को सोंप देना और संसार में सम्मान पूर्वक रहने की योग्यता होने पर स्वयं सब कुछ उसे देकर वानप्रस्थ हो जाना यह प्राचीन पद्धति थी। पर जब क्रम बिगड़ गया और मनुष्य स्वार्थ का कीड़ा बन गया-सन्तान को अपने बुढ़ापे में [?] सुख देने की लालसा से पालने लगा तो जन बल-अत्यन्त नीच और निकम्मा हो गया।

कारण—अब बच्चों को उपयुक्त शिक्षा नहीं दी जा सकती। अनेकों से हमने पूछा-कहिए आपका लड़का क्या पढ़ता है-तो जवाब मिला! अजी पढ़ा लिखाकर क्या हमें नौकरी कराना है-चिट्ठी पत्री लिखना-हिसाब किताब जाँचना आ गया-बस हमारी दुकान को यही बहुत है। ऐसा ही उत्तर कन्याओं के लिए भी सुना गया-कि पढ़ा लिखा कर क्या दफ़्तर भेजना है! इत्यादि। यह कैसी नीचता और नामर्दी का उत्तर है कि अपने स्वार्थ से हम एक होनहार बालक की समस्त बढ़वार रोक देते हैं, और

मन माने ढंग से कांट छाँट कर उसके जीवन को अपनी गुलामी के उपयुक्त बना लेते हैं-क्या यह अत्याचार-घोर अत्याचार नहीं है ?
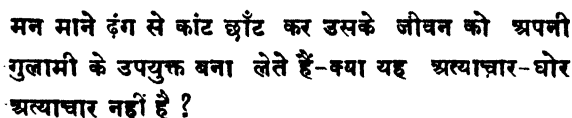
इसका परिणाम यह हुआ कि हमारे देश की बहुत बड़ी संख्या भी संसार के सामने मूल्यवान् साबित नहीं हुई। जर्मनी के ६ करोड़-इंग्लैण्ड के ४ करोड़-और फ्रांस के ५ करोड़ मनुष्यों का जितना मूल्य है, उतना एक ओर रहा, उससे पच्चीसवाँ हिस्सा भी मूल्य हमारे ३४॥ करोड़ मनुष्यों का नहीं है। हम बिल्कुल निकम्मे-बोदे-पोच-कायर और पाजी बच्चे पैदा कर रहे हैं, जो संसार के बाज़ार में निहायत निकृष्ट दर पर बिकते हैं और अब तो किसी भाव भी कोई नहीं ख़रीदता ! कैसे खेद की बात है कि जिनके पूर्वजों के पादस्पर्श को संसार सौभाग्य समझता था उनकी सन्तान को कोई किसी भाव भी नहीं ख़रीदता! पर इसमें दोष हमारा ही है; क्योंकि हर एक वस्तु का मूल्य तीन बातों पर निर्भर है—१ उपयोगिता, २ टिकाऊपन और ३ सुन्दरता। एक घड़ी आप ख़रीदिये, वह वक़्त देने में, सच्चेपन में, सुन्दरता में और टिकाऊपन में जितनी अच्छी होगी उतनी ही अधिक मूल्य में मिलेगी। अब हमें यह देखना है कि हमारे बच्चे इस कसौटी पर कैसे उतरते हैं।

पहले उपयोगिता को लीजियेगा – प्रत्येक महकमे में चाहे वह शारीरिक बल सम्बन्धी हो चाहे मानसिक; भारतवासी को संसार में निकृष्ट स्थान मिलता है और यदि कोई उत्तम स्थान दे भी दिया जाता है तो वह सदा उसकी मर्यादा का कुत्सित प्रयोग करता रहता है। मैं कुछ इने गिने सज्जनों की बात नहीं कहता, जो वास्तव में उच्चाशय होते हैं—अभिप्राय सरसरी नज़र से है। माननीय मेकलियाड के अनुसार अमेरिका का एक श्रमी ५ टन, इंग्लैण्ड का १।। टन, भारत का सिर्फ़ ।। टन कोयला प्रति दिन खोद सकता है। अर्थात् एक अमेरिकिन् श्रमी दश भारतीयों के बराबर शरीर परिश्रम में उपयोगी है। इस लेख में चाहे जो अत्युक्ति हो-पर हम इसके मूल में सच्चाई अवश्य पाते हैं और उसके कारण प्रत्यक्ष हैं। सब प्रकार के शारीरिक और मानसिक बलों के लिये जातीयता, पुष्टि कर उत्तम भोजन, अच्छे स्वच्छ मकान, लाभ की आशा-निश्चिन्त मन और स्वतन्त्रता की आवश्यकता है—जो भारत के बच्चों से कोसों दूर है। जिन अभागों को सात पुश्त से सड़ा अन्न खाते खाते—कुत्तों और सूअरों से से भी निकृष्ट स्थिति में रहते रहते-मलेरिया-तिल्ली-क्षय-और श्वास के रोग पैत्रिक सम्पत्ति के रूप में भाल पट्ट पर लिख

दिये गये हैं उनके शरीर और मन की शक्तियाँ कहाँ ठहर सकती हैं ? और वे उनका क्या उपयोग कर सकते हैं ?

हमारे बच्चों को न शिक्षा का-न रक्षा का-न काम करने का—न सुख से रहने का-न अपने को पहचानने का सुभीता है तो वे क्या उपयोगी बन सकते हैं ? अवस्था यहाँ तक गिर गई है कि संसार की सभ्य जातियों में भारतीय कुली भी नाक भौं सिकोड़ कर स्वीकार किये जाते हैं ! कैसे मज़े की बात है—अपने घर के बड़े बड़े पद, अफ़सरी-प्रोफ़ेसरी-इञ्जीनियरी आदि पराये हाथों में सौंप कर हम जब उनके घर मजूरी की भीख माँगने जाते हैं तो कुत्तों की तरह दुदुराये जाते हैं ! हम अपने घर में-अपने देश में-रह कर तीसरे दर्जे में सफ़र करते हैं, सड़ा सस्ता मोटा अन्न खाते हैं—दिन भर पसीना बहाते हैं और भरी जवानी में कुत्तों की मौत मर जाते हैं-और संसार के प्रवासी हमारे उसी दरिद्र घर में रिज़र्व फ़र्स्ट क्लास में सफ़र करते, उत्तम बंगलों का स्वर्गसुख लूटते और खाते २ जो बच रहता-उसे अपने बड़े २ पाकिटों में भर कर अपने भाग्यवान् घरों को ले जाते हैं। तब हम यह समझें कि हमारा घर ग़रीब-निकम्मा-और किसी काम का नहीं

है या यह समझें कि हम ही किसी उपयोग के नहीं हैं ? प्रमाण तो पिछली ही बात के मिलते हैं।

भारतवासियों की पैतृक सम्पत्ति का मूल्य प्रतिजन १४≡) और अँग्रेज़ों का ४५७०) रु० है। भारत की जातीय सम्पत्ति ५४०००००००००) [चौव्वन अरब रु०] आँकी जाती है, पर अमेरिका की ३३१ अरब और जर्मनी की २४० अरब, ग्रेटब्रिटेन आयर्लेण्ड की २७० अरब रुपये आँकी गई है, हालां कि भारत की आबादी इन देशों से ५ या छःगुनी अधिक है !!!

सन् १८५० में प्रत्येक भारतवासी की आमदनी प्रति व्यक्ति ८ पैसे थी। सन् १८८२ में सरकारी रिपोर्ट द्वारा फ़ी आदमी की फ़ी दिन की आमदनी ६ पैसे ठहरी—और सन् १९०० में डिग्बीसाहेब के हिसाब से यह घट कर कुल)।। रह गई। अमेरिका वालों की १।।≈) आस्ट्रेलिया की १।।।≈) इंग्लैण्ड की १।।) फ्रांस की १।) जर्मनी की १) आस्ट्रिया की ।।≡) इटली की ।।≈) और हमारी सिर्फ़ ३ पैसे !! कहिये, हम कैसे उपयोगी और कमाऊ हैं ? यह न समझना कि भारत दरिद्र है इससे योग्यता होने पर भी नहीं कमा सकते। यही भारत प्रतिवर्ष विदेशी अफ़सरों को २२।। करोड़ रुपया तनख़ा देता है। जो रिश्वत और

डालियों में पेट भर कर सारी बचत घर को भेज देते हैं।

वे लोग झूठे हैं, जो कहते हैं कि भारत में समृद्धि नहीं हो सकती; भारतीयों का दरिद्र रहना प्राकृत है। प्रसिद्ध मौलसवर्थ का कथन है कि—

'भारत भूमि धन की खान है"

इसमें नाना प्रकार के खेती—खनिज--और उद्योग के लिये प्राकृतिक सामान हैं, उत्तम कोयला है, उम्दा मिट्टी का तेल है, लोहे और लकड़ी की उत्तमता देखकर इंग्लैंड वालों की राल टपक पड़ती है, सोना, चाँदी, तांबा, टीन और अनेक रत्नों की कमी नहीं है यहाँ तक कि रेडियम भी पुष्कल प्रमाण में पाई गई है। तिस पर भी भारत भूखों मरता है !!

सन् १८०१ ई० से १८२५ तक २५ सालों में सम्पूर्ण भारत में १५ लाख मनुष्य अकाल में भूखे तड़फ तड़फ कर मर गये। सन् १८२५ से १८५० तक इन २५ वर्षों में और भी अधिक अकाल का ज़ोर रहा। सन् १८५० से १८७५ तक (२५ वर्षों में) देश में ६ बार अकाल पड़ा और ५० लाख आदमी भूख से छटपटा कर इस लोक से कूंच कर गये। पर इसी सदी के अन्तिम २५ वर्षों में १८७५ से १९०० तक १८ बार प्रचण्ड देश व्यापी अकाल

पड़े, जिन में प्राय: २ करोड़ ६० लाख महा प्राण स्वाहा हो गये !!! इनमें से केवल पिछले १० वर्षों में ही १ करोड़ ६० लाख भारतीय भाई हाय अन्न ! हाय अन्न !! करते करते छटपटा कर मर गये !!! और इन की अन्तेष्ठी क्रिया जंगली कुत्तों और सियारों ने की ! जो भूमि शस्य श्यामला कहाती है, माता अन्नपूर्णा जहाँ सँसार को भीख देती हैं—उसी देश की यह कहानी है ! प्रकृति ने इस देश को इतना दिया है कि वे पदार्थ केवल इसे ही काफ़ी नहीं, सारे संसार को सुविधा से भेजे जा सकते हैं, पर कब ? जब हम अपनी उपयोगिता बढ़ावें और क्लर्की, बैरिष्टरी और बाबूगिरी को लात मारकर, गुलामी पर थूक कर स्वतन्त्र उद्योग धन्धों में योग दें।

उपयोगिता की कहानी सुना दी गई अब टिकाऊपन को देख लीजिये।

पौष्टिक शुद्ध सात्विक भोजन का अभाव, जन्म से मृत्यु तक बनी रहने वाली दुश्चिन्ता—रहने के स्थानों में स्वच्छता की बड़ी भारी कमी, और संसार में सुखी रहने की योग्यता का अभाव-मूर्खता पूर्ण अनेकों कुरीतियाँ, गड़बड़, निराश जीवन—इन सब ने मिल कर हमारे जीवन की रस्सी को खोखला कर दिया है। अकाल और रोग और

दूसरे अनेकों उपायों से हम मृत्यु के निकट पहुँच रहे हैं—अकाल से मृत्यु के रोमांचकारी दृश्य आप देख आये हैं। अब रोग से मृत्यु संख्या देखिये—

सन् १८९९ से १९०८ तक कुल दश वर्षों के बीच में इस प्रकार मृत्यु हुई—

पुरुष	३९६३८६५४	ज्वर से	४४९९६३५०
स्त्री	३७३४९५११	हैज़े से	३८०७२९५
कुल	७६९८५१६५	प्लेग से	५०१६४४३

१९०८ ई० में जो सारे संसार से भारत की मृत्यु-संख्य का मुक़ाबिला किया गया था वह यह था—

आस्ट्रेलिया फ़ी हज़ार	९.३
स्वीडन	११.७
जर्मनी	१८.१
इंग्लैण्ड	१४.=
अमेरिका	१५.३
डेन्मार्क	१३.१

और भारतवर्ष मे सुनिये—

बंगाल	९४.२५
संयुक्त प्रान्त	११४.८३
पंजाब	१२१.४३

मध्यप्रदेश	३८.१२
बम्बई	४८.२६
मद्रास	७०.८

कहिये, इस मुसीबत का भी कुछ ठिकाना है ? विलियम डिग्बी साहिब का कथन है कि—

"भारतवासी रोगी ही पैदा होते हैं, और रोग से ही जानवरों की तरह मर जाते हैं..."

आप कहेंगे—मरते तो सभी हैं—पर हमारा कथन तो यह है कि समय पर मरना किसी को नहीं अखरता, पर जब करने की उम्र होती है तभी हम मर जाते हैं। अंग्रेज़ों की आयु की औसत ४० वर्ष है और हमारी २३ वर्ष ! इसका मूल्य देखिये—

जगत्प्रसिद्ध विवेकानन्द की मृत्यु ३९ वर्ष की अवस्था में हुई। श्रीयुक्त दीनबन्धु मित्र की ४२ वर्ष में, कृष्णा स्वामी अईयर की ४६ वर्ष की अवस्था में। स्वामीराम तीर्थ की ४१ वर्ष की आयु में, इसी प्रकार धार्मिक राजनैतिक अनेक नेता विद्वान् गणों की मृत्यु अल्प काल में हुई है। डारविन ने अपनी प्रसिद्ध 'विकास वाद' की पुस्तक को ५२ वर्ष की उम्र में लिखा था। लार्ड केल्विन साइन्स का अन्वेषण ७८ वर्ष की उम्र तक करते

रहे। सर विलियम कुक्स की आयु ७७ वर्ष की हुई, प्रसिद्ध अमेरिकन आविष्कारक एडीसन की अवस्था ८६ वर्ष की हुई। संसार के महापुरुष जिस उम्र में उत्तम कार्य कर सकने योग्य प्रतिभा और अनुभव प्राप्त कर सकते हैं उस समय तक हमारे देश के महापुरुषों की हड्डियां भी गल सड़ कर मिट्टी हो जाती हैं। शोक!

फूल तो दो दिन बहारे जाँ फ़िज़ाँ दिखला गये।
हसरत उन गुञ्चों पे है जो बिन खिले मुरझा गये॥

अब लगे हाथों—अपने सौन्दर्य का भी दिग्दर्शन कर लीजिये। सौन्दर्य ३ प्रकार का होता है—शरीर का, आत्मा का, और हृदय का। शरीर के सौन्दर्य का तो पूँछना ही क्या है-सारे संसार में इस सौन्दर्य को काले कुत्ते का ख़िताब मिला हुआ है! रहा आत्मा का सौन्दर्य-जो आस्तिकता, दृढ़ता और आत्मा की पवित्रता द्वारा आज़माया जाता है; सो जिस देश में असंख्य मत हों, असंख्य देवता पूजे जाते हों-और किसी पर भरोसा न हो, अपने पहाड़ से पाप को यत्न से छिपा लिया जाय और भाई की राईसी भूल के बदले धक्का देकर शत्रु बनाया जाय, बन्धुत्व-और सहृदयता—सहानुभूति के बदले जहां मजूँरी माँगी जाय, वहाँ आत्मा के सौन्दर्य की तारीफ़ न करना ही अच्छा है। और हृदय के

सौन्दर्य का चित्र तो आपके गृहचरित्र हैं—वह जैसे घृणास्पद नीच, नीचतर—दुःखों के जमघर—और अत्याचार का केन्द्र बने हुए हैं उनका कोई चित्र खींचे तो वह आपके हार्दिक सौन्दर्य का चित्र होगा। पुस्तक में से कुछ चित्र फाड़ लेने के कारण एक जापानी पुस्तकालय से भारतीयों का प्रवेशाधिकार ही छिन गया था। खेद है, इससे अधिक कलुषित हृदय और क्या होगा।

अब आप ही कहिये कि आपके बच्चों की क्या कीमत हो सकती है? और वे कैसे संसार में प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकते हैं।

बच्चे क्या खायेंगे—कैसे पलेंगे—किस भाँति शिक्षित होंगे—इस पर कभी हम विचार नहीं करते, जैसी लापरवाही से विवाह करते हैं वैसी ही लापरवाही से बच्चे पैदा करते हैं—साफ़ तो यों है कि लोग व्यभिचार के लिये स्त्रियों के पास जाते हैं, बच्चे अपने आपही ज़बर्दस्ती उत्पन्न हो जाते हैं; वे बच्चे पुष्ट–सुन्दर–उच्च कैसे बन सकते हैं। लोग समझते हैं कि उनकी आमद कम है–अधिक सन्तान को वे शिक्षित नहीं कर सकते—पर संयम का अभाव होने से वे अपनी कामलिप्सा में लगे रहते हैं—फलतः बेढब बढ़वार बढ़ रही है।

भारत में दूध की कमी है और वह दिन दिन बढ़ती ही जा रही है। देश में कुल ४ करोड़ गाय भैंस हैं जो ६ महीने दूध देती हैं, इस प्रकार दो करोड़ पशुओं के दूध पर ३४।। करोड़ भारत वासी गुज़र करते हैं। औसत निकालने से १५ आदमियों का गुज़ारा १ गाय के दूध से होता है—जब दूध का ऐसा अभाव है तो दूध पर ही जीने वाले बच्चे कैसे जी सकते हैं?

इसका फल यह है कि १ वर्ष की आयु तक के बच्चे फ़ी हजार ३३३ मर जाते हैं—अर्थात् हर ३ बच्चों में १ मर जाता है। कुल मिला कर प्रति वर्ष २८ लाख बच्चों की मृत्यु होती है! और यह संख्या दिन दिन बढ़ रही है।

भारत गर्म या मोतदिल देश है—जो वैज्ञानिक रीति से बच्चों के लिये हितकर होना चाहिये। और यहाँ की स्त्रियों को यूरोप की स्त्रियों की तरह कल कारख़ानों में भी काम नहीं करना पड़ता-केवल बच्चों का पालन भार ही रहता है। हमारे बच्चे दाई नहीं पालतीं, स्वयं मातायें ही पालती हैं—तब भी ३ बच्चों में १ मर जाता है—और इंग्लैण्ड में जहाँ बहुत ठण्ड पड़ती है—माताओं को दिन भर महनत मजूरी करनी पड़ती है—जहाँ अकसर किराये

की दाई बच्चों को पालती हैं-वहाँ १३० बच्चे प्रति हज़ार का औसत है। अर्थात् आधे से भी कम !

सब देशों में मृत्यु संख्या कम होती जा रही है—पर भारत में बढ़ रही है। इग्लैण्ड में प्रति हज़ार ७० आदमी किसी समय में मरते थे। वे अब कम होते होते १८६९ में ३०, १८८० में २८ और १९०१ में १५ मरने लगे।

पर भारत की मृत्यु संख्या बढ़ रही है। यहाँ १९०१ में फ़ी हज़ार २६, १९०२ में ३१, १९०३ में ३४, १९०७ ३७, १९०८ में ३८ आदमी मरे। संयुक्त प्रान्त में तो ५३ तक नम्बर पहुँच गया है।

ये सब हत्याएँ हमारे सिर हैं-जिनका पालन हम नहीं कर सकते उन को मरने के लिये-सिर्फ़ खून चूसने के लिये उत्पन्न करना-महापाप-घोर पशुपना और घृणित असभ्यता है।

प्रसिद्ध विद्वान् माल्थस का कथन है कि—

"जब किसी देश के मनुष्यों को भर पेट भोजन नहीं मिलता तब उस देश में केवल दुर्भिक्ष ही नहीं पड़ता। प्रत्युत ऐसे देशों में तरह तरह की तकलीफ़ें पैदा हो जाती हैं-बुरे रस्मरिवाज़ फैलते हैं और व्यभिचार तथा अनाचार की वृद्धि होती है।"

हम यह समझते कि—स्कूल जाना, अंग्रेजी शिक्षा पाना बच्चों के लिये जरूरी है। माता पिता का कर्तव्य इसी में पूर्ण हो जाता है, जो माता पिता बच्चों को अंग्रेज़ी स्कूलों में भेज देते हैं। मानो वे आदर्श माता पिता हैं। वहाँ पर स्कूल में होता क्या है? दुर्बल बच्चे, मनमारे, डर से काँपते, तख्ते की बेंचों पर, सील भरे कमरे में अर्थ हीन और अनावश्यक बातों से परिपूर्ण, निकम्मी किताबों पर हठ पूर्वक दृष्टि जमाये बैठे रहते हैं, सामने दुर्भाग्य के अवतार, क्रोध के भैरव, पूरे मूर्ख, टूटी लियाकत की खुर्चन लिये, लपलपाती बेंत हाथ में लिये मास्टर साहेब मास्टरी की नौकरी बजाते हैं।

उनके श्रीमुख से अलाय बलाय, शुद्ध अशुद्ध जो निकले वह यदि लड़के की तत्काल अकल में जमकर न बैठ जाय, तो फिर तड़, तड़, पींठ पर बेंत पड़ती है—ग़रीब की कोमल खाल उपड़ जाती है, कमर दूवर हो जाती है। पर वह कसाई इस से भी सन्तुष्ट न हो उन्हें मुर्गी बनाता है। गाली तो मानो किसी गिनती की वस्तु ही नहीं है।

छोटे लड़के पिटने के डर से और बड़े लड़के इम्तिहान में फेल होने के डर से शुरू से आखिर तक पढ़ते हैं। और

चाहे वे कुछ न सीखें, पर प्रेम की रसीली कविता, आशिकी मजमून के खत लिखना, माँग निकालना, बड़े कालर की कमीज पहनना, बूट और पतलून पहनना अवश्य ही सीख लेते हैं। वह लड़का यदि किसी कारीगर या श्रमी पिता का पुत्र हुआ तो अपने पैत्रिक कार्य में पिता का सहारा देना उसकी परम मानहानि की बात है। पिता किसी काम को कहते हैं तो तत्काल जवाब मिलता है—वाह, मुझे तो खेल में जाना है। वरना जुर्माना हो जायगा। और सचमुच जुर्माना हो भी जाता है। ज्यों २ कक्षा ऊँची चढ़ती है—पुस्तकों की तादाद बढ़ती जाती है—गधे की तरह लद करके स्कूल जाते हैं और पागल की तरह दिन रात आँखें फोड़ा करते हैं।

अंग्रेज़ी शिक्षा ने हमारे मस्तिष्क से हमारे अतीत की स्मृति को मिटा दिया—हम क्या थे, यह भुला दिया। भले-मानस मैक्समूलर ने कहा—वेदों में किसानों के गीत हैं। हमारे स्कूल के मास्टर ने कहा—हमारे पूर्वज मूर्ख, जंगली और अवारा थे। हम असभ्य कालों की सन्तान हैं। हमने यह भी देखा—हमारा घर दरिद्रता की मूर्ति है। और बाहिर से आये हुए अंग्रेज़ सुन्दर बंगलों में बड़े ठाठ से रहते हैं। हमारे बच्चे धूल में पड़े खेलते हैं, उनके बच्चे

गुलाब के पुष्प के समान चटखते फिरते हैं। हमारी स्त्रियाँ चौके चूल्हे में जली जाती हैं, उनकी परी बनी फिरती हैं। हम दरिद्र भिखारी लुभा गये—उनकी श्रेष्ठता पर ललचा गये। पिछड़ा ज्ञान था, अतीत की शिक्षा देने वाला कोई न था। वर्तमान अत्यन्त निकृष्ट था। हम पतित हुए। हमारी यह धारणा बँध गई, कि हम इनको आदर्श मान कर अपना सुधार करेंगे। इनका अनुकरण करेंगे।

हमने पतलून बनवाई, कोट कॉलर-नेकटाई तैयार कराये और घोर गर्मी का कष्ट सहकर भी सबके सब पहनने शुरू किये। हमारे बच्चों ने अंग्रेज़ी खिलौनों से मन बहलाया। अंग्रेज़ी काट के कपड़े उनके काले, दुर्बल और रोगी शरीर पर बहार दिखाने लगे। हमारी स्त्रियों ने बूट पहना, अंग्रेज़ी ढङ्ग की कुर्ती पर साड़ी चढ़ाई, घर में मेज़ कुर्सी जम गई। बूट पर पालिश करने के ब्रुश और शीशी सजाये गये। धीरे २ हम काले अँग्रेज़ बनने लगे। मोर के पङ्ख खोंस कर कौवा जैसे मोर बनता है। ये हमारे दुर्दिन थे।

कोई ऐसा न था कि हमें आत्मबोध करावे। अँग्रेज़ी बोलना बड़प्पन की और गर्व की बात समझी जाने लगी। अंग्रेज़ों की नौकरी आदर की बात समझी जाने लगी।

दिल्ली में प्रख्यात कवि गालिब रहते थे। प्रारब्धवश ये महापुरुष अत्यन्त ग़रीब थे। बादशाह के उस्ताद ज़ौक से इनकी एक कविता पर खटपट हो गई थी। इस से बादशाह की नज़र इन पर नहीं थी। ग़रीब होने पर भी मन में बड़ा तेज़ बनाये रखते थे। जब दिल्ली में मिशन कालेज़ खुला और उसमें फ़ार्सी के प्रोफेसर की आवश्यकता पड़ी, तब मिर्ज़ा साहेब की—तरफ़ सब का ध्यान गया। इनसे प्रार्थना की गई। और इन्होंने स्वीकार भी किया। पहिले दिन ये तामजाम में बैठ कर गये। कालिज के द्वार पर जाकर चपरासी की मार्फ़त साहब से सूचना कराई। साहब ने जवाब भेजा—भीतर चले आइये। साहब मिर्ज़ा के पूर्व परिचित थे। बोले-क्या साहब हमारे इस्तक़बाल को दर्वाज़े तक न आवेंगे? यदि न आवेंगे तो हम कभी भीतर न आवेंगे। साहब आये और हाथ मिलाया। पीछे हंसकर बोले—मिर्ज़ा साहब! हमारी आपकी दोस्ती की बात अलग है; नौकरी की अलग है। पहले जब आप आते थे बतौर दोस्ती के आते थे। अब आप कालिज के नौकर हुए बेतकल्लुफ़ चले आया कीजिये-मुझे इत्तला करने की क्या ज़रूरत है; मिर्ज़ा ने कहा—सरकारी नौकरी को मैं इज़्ज़त

की चोज़ समझता था। मगर अभी पहला ही क़दम—और इज़्ज़त गई। सलाम—बन्दे को नौकरी से इस्तीफा है। उल्टे पैरों तामजाम पर चढ़ कर चल दिये।

यह घटना इस बात पर प्रकाश डालती है कि मिर्ज़ा जैसे तेजस्वी पुरुषों को भी सरकारी नौकरी की प्रतिष्ठा पर एक बार विश्वास हो गया था। ये दिन थे जब भारत के बच्चे अंग्रेज़ी सरकार की नौकरी के लिए शरीर और पैसे का खून करके पढ़ रहे थे। ये दिन थे जब भारत के बच्चे अंग्रेंज़ी सभ्यता की कृपा कटाक्ष पाने के लिए बड़े २ यत्न कर रहे थे। रईस लोग अफसरों को दावत खिलाना सौभाग्य समझते थे। स्त्रियाँ मेम साहब को लोकोत्तर वस्तु समझती थीं। हमें अपने ऊपर घृणा थी। अपने ऊपर अविश्वास था। अपने को हम तुच्छ समझते थे। मनुष्यत्व के अधिकार प्राप्त करने के हौंसले किसको होते?—हम केवल अंग्रेज़ी सरकार के गुलाम बनने को ध्येय समझते थे। हम काले थे-हमें बताया गया था कि हम काले जंगलियों की सन्तान हैं। इसमें हमारा अपराध न था-हम छः सौ वर्ष से पिट रहे थे। कहाँ हमारा आत्म-तेज रहता? कहाँ हमारी पूर्व स्मृति रहती?—कहाँ हमारा

वंश गौरव रहता–हम कितने पिटे, कितने लुटे, कितने क़ैद रहे, कितने अपमानित रहे ??

उस दिन हमारे पास कुछ न था, हमें जैसा बताया गया था, हम वैसे ही हो गये थे। और हमें यह भी न मालूम था कि हम कैसों की सन्तान हैं—सो हम पूरे गुलाम होकर गुलामी की पूरी तैयारी कर चुके थे।

मनुष्य समाज के लिए शिक्षा प्राकृतिक दृष्टि के अनुसार अनिवार्य होनी चाहिए। क्योंकि वह जीवन का साध्य है। शिक्षा के अनुसार ही देश की राजनैतिक अवस्था में, और देश की सभ्यता में उन्नति या अवनति होती है। यदि किसी जाति की शिक्षा देश काल के अनुसार वर्तमान जीवन संग्राम में खड़े करने योग्य नहीं है–तो उनसे शिक्षित हुए व्यक्ति जीवन संग्राम के भयङ्कर युद्ध में कभी विजयी नहीं हो सकते।

संसार परिवर्तनशील है, अब से १००० वर्ष प्रथम हमारे देश की जैसी आवश्यकताएँ थीं, उनमें अब में अन्तर पड़ गया है। देश की अवस्था जैसी तब थी अब वैसी अब नहीं है, इसलिये शिक्षा प्रणाली भी नये नये आविष्कारों से विभूषित, नई नई आवश्यकताओं को पूरा करने वाली, तथा जीवनप्रद होनी चाहिये। उदाहरण

स्पष्ट है नदी का बहता हुआ जल सदा ताजा ताजा स्वच्छ एवं जीवनदाता बना रहता है, पर पोखर का स्थिर जल गन्दगी और बीमारियों का फैलाने वाला होता है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है–शिक्षा जीवन का खाद्य है, इसलिये शिक्षा ऐसी होनी चाहिये, जिससे हमारे नित्य के जीवन का घनिष्ठ सम्बन्ध हो।

यह सत्य है कि गवर्नमेण्ट के प्रयत्न से शिक्षा की दिन दिन वृद्धि हो रही है पर खेद की बात यही है कि उस शिक्षा से हमारे जीवन का रासायनिक सम्मिश्रण नहीं होता। शिक्षा की पद्धति–शैली--विषय और प्रकार विदेशी होने से, भाव पराये होने से–वह ज्यों ज्यों हम अधिक शिक्षित होते हैं त्यों त्यों हमें जीवन से दूर ले जा रहा है। सभ्यता के लिबास की तरह–हमारी शिक्षा हमारे कोट पैन्टों के पाकेट में रखी रहती है–ज्यों ही हम आफ़िसों से लौट कर घर आते हैं, कपड़ों के साथ उसे भी उतार कर खुण्टी पर टाँग देते हैं। हम चाहें वकील हों या बैरिस्टर, जज हों या और आला अफसर–आफिस के सिवा हमारा जीवन निरा गंवार जैसा बीतता है–हम अपनी विद्या को अपने स्त्री बच्चों के साथ मन को प्रफुल्लित करने के काम में नहीं ला सकते।

शिक्षा मन का भूषण है. अथवा मन के निवास का आश्रम है; हम मन के उस आश्रम को आवश्यकता [?] के फेर में पड़ कर अत्यन्त संकुचित कर डालते हैं।

हमारा शरीर ३॥ हाथ का है—और ३॥ हाथ के ही मकान में वह आ सकता है—पर उस में तुरन्त दम छोड़ कर मर जाना पड़ेगा। साढ़े तीन हाथ के शरीर को घूमने फिरने योग्य—खुलासा मकान 'आवश्यक' है; उसी प्रकार मन और मस्तिष्क को इतनी विस्तृत शिक्षा की आवश्यकता है कि जिस में वे स्वच्छन्दता से विचार सकें। केवल आवश्यक शिक्षा के फेर में मन को क़ैद करके सड़ा डालना बड़ा ही भयानक है।

यह बूढ़ा भारत वह देश है जहाँ प्रत्येक विषय कवित्व द्वारा प्रकट किये गये हैं—जहाँ विज्ञान और योग—सूत्र बद्ध हैं—और कर्म काण्ड की पद्धति अखण्ड है—जहाँ की कल्पना पर संसार को हसद हो रहा है- वही देश है जहाँ के उच्च डिग्री धारी पुरुष नक़ल और अनुवाद को छोड़ कर स्वतन्त्र रचना नहीं कर सकते; उनका भाव—विषय बिल्कुल पराया होने पर आवेश का उदय नहीं होता। इंग्लैण्ड एक ठण्डा प्रदेश है - वहाँ का कोई कवि मई मास में ग्रीष्म सौन्दर्य का वर्णन कर रहा है- क्योंकि वहाँ मई

में बसन्त का मज़ा आता है—पर उस कविता को एक भारतीय विद्यार्थी मई मास में पसीनों से तर—और लूओं से झुलस कर पढ़ता हुआ वह आनन्द नहीं प्राप्त कर सकता, उसे भावावेश बिल्कुल नहीं होता—उसे कुछ स्फूर्ति-या मनोरंजन नहीं होता-वह केवल-परीक्षा में पास होने के भय से [?] घोट घाट कर मटर के टिक्कों की तरह उसे गले से उतारता है-आप ही कहें ऐसी निरानन्द-मयी कविता को पढ़ कर क्या धूल विकासबुद्धि का उदय होगा ? जिस देश में अब क्लर्क पैदा होते हैं-जो केवल निरन्तर नौ घण्टे गोरे प्रभु के चरणों में स्टूल पर बैठ-कर डेस्क पर झुके हुये-झख मारा करते हैं। क्या ये ही शिक्षित हैं ? अदालतों के मुन्शी-मुहर्रिर-पेशकार-डिप्टी-तहसीलदार कितना अत्याचार और बेईमानी करते हैं-इसे भुक्त भोगी ही जानते हैं। पुलिस वालों की तो बात ही निराली है-यूनीवर्सिटियों के पदवी-धर-क़ानूनी शरीफ़ पेशा लोग-लोगों के अधिकारों की रक्षा करने के बदले-उनका सर्वस्व लूटते हैं-वेश्याओं की तरह धन के लिये अपने तन और आत्मा को बेचना ही इन की ड्यूटी है ?

इस पवित्र ड्यूटी शब्द का अर्थ अगर भारत के

शिक्षित समझते होते तो वे भी जापान की तरह ५० ही वर्षों में कुछ का कुछ हो जाते।

पर जो गुलामी के लिये पढ़ते हैं—नौकरी में जिनका सम्मान है—वे अभागे इससे अधिक ड्यूटी का क्या अर्थ समझ सकते हैं?

शेक्सपियर के नाटक और बैरन की कविता पढ़कर उनकी आखों में ऐसा सुरमा लग जाता है कि वे काली आखों के स्थान पर नीली आँखों और काले केशों के स्थान पर भूरे बालों को सुन्दर देखने लगते हैं, उनके हृदय में नायिका की एक अद्भुत प्रतिमा अंकित हो जाती है। उनके मस्तिष्क में और ही प्रकार का गृहचरित्र खचित हो जाता है। प्यास उनको वैसी उत्पन्न हो जाती है, पर मिलती है उनको भोली भाली गाँव की सरला मुग्धा बालिका, परिणाम यह होता है कि बाबू साहिब के मन से ही उनकी नवेली उतर जाती है! ऐसे कितने ही गृहस्थ हैं, जो इस राक्षसी शिक्षा के कारण कटु बने हुए हैं।

सारांश यह है कि हमारे जीवन का खेत जहाँ लह-लहाता है, उसके अंकुर जहाँ उगते हैं, उससे बहुत दूर शिक्षा का मेह बरस रहा है। हमारे जीवन और शिक्षा के

बीच में कोष और व्याकरण का पुल होता है उसी पर हो कर हमें गुज़रना पड़ता है।

सारे संसार की सभ्य जातियाँ अपनी भाषा रखती हैं और उसी के द्वारा वे सब कुछ सीखती सिखाती हैं, पर हमारा दुर्भाग्य देखो, कि हम उसके लिये भी पराये मोहताज हैं। एक बंगाली और पंजाबी परस्पर भाई होने के कारण एक दूसरे से हृदय मिलना चाहते हैं, पर उन के भावों को समझाने के लिये ७ हज़ार मील से परायी ज़बान आती है? और हमारी मातृ भाषा गली कूचों में टकराती फिरती है। इसका कुफल प्रत्यक्ष हो गया कि हमारी जातीयता धीरे २ नष्ट हो रही है, धर्म, विश्वास, शिथिल पड़ रहे हैं, जिन सामाजिक बन्धनों की बदौलत हज़ारों वर्ष से हम जिन्दा रहते आये हैं, उनकी जड़ में कीड़ा लग गया है, आज हम हिन्दू कहाते हैं, पर हिन्दुत्व का कोई चिन्ह हम में नहीं है। पराई भाषा, पराया वेष, पराया जीवन, पराया हृदय, पराया मस्तिष्क, सब कुछ पराया है। जिस शिक्षा में सूझ नहीं, जो बुद्धि के विकास में सहायता नहीं देती और जिसमें संकट दूर करने का उपाय ढूंढ निकालने का बल नहीं, वह शिक्षा नहीं—कुशिक्षा है।

एफ० ए० तक की शिक्षा इतनी है जिस में उन्हें अंग्रेज़ी भाषा के भावों को किसी तरह समझने की योग्यता आ जाती है। करीब १२ वर्ष के पूरे परिश्रम से बच्चा यहाँ तक पहुँचता है। परन्तु यहाँ तक पहुँचते २ उसकी विचार और भावना की शक्ति कुछ भी काम न आने के कारण मुरझा जाती है। उसका विकास नष्ट हो जाता है, विदेशी पुस्तकों की भाषा यदि वह बल-पूर्वक रट २ कर सीख भी ले तो भी भाव उसकी समझ में नहीं आ सकते।

बी० ए० की श्रेणी में आकर एक दम भावना की जरूरत होती है, पर अब तक अविकसित रह कर जो भावना मुरझा गई थी वह अब कहाँ से आवेगी। निदान वह अभागा वहाँ भी नोट याद करके ही लेखकों का मतलब समझता है।

माता-पिता के साथ सहकुटुम्ब बनकर रहना तो एक प्रकार से उन्हें असह्य हो जाता है। भीतरी जीवन में ही आग लगे यही नहीं, उनका बाहरी जीवन उस से भी अधिक सन्तप्त हो जाता है।

जब वे एम० ए०, बी० ए० में दर्शन, न्याय, कवित्व, तर्क, साइन्स के महत्व पूर्ण, सबक पढ़ा करते हैं, तब वे

अपने गंवार बाप, भाई, अड़ोसी, पड़ोसी को तुच्छ दृष्टि से देखा करते हैं। उन्हें मूर्ख समझते हैं—उन पर दया दिखाते हैं। धरती पर पैर नहीं रखते, अपने को अपने गरीब और मूर्ख देश से चार अँगुल ऊँचा समझते हैं। पर जब पूरी किताबों को निगल कर, पास हो कर बाहिर आते हैं। और सार्टिफिकेट के बण्डलों को दबाकर साहबों के दफ़्तरों में मक्खी की तरह भिनभिनाते गुलामी ढूंढते फिरते हैं। और वहाँ या तो जगह नहीं मिलती या मिली तो फटकार, गाली, जुर्माने और डिस मिस के चपेट खाकर साल भर ही में ढीले हो जाते हैं। वे देखते हैं कि वे कवित्व, वे तर्क, वे साइन्स के सिद्धान्त कुछ भी काम नहीं आ रहे हैं। वह जगत् भर का भूगोल पढ़कर भूल भी गये, किसी काम न आया। अन्तत: वे अब अपनी योग्यता पर भरोसा न करके खुशामद पर बसर करते हैं। और इसी के आसरे पर पतित जीवन को काटते हैं।

ऐसे पुरुष पुत्रवान् होंगे? ये लोग धनवान् होंगे? बुढ़ापे तक जी सकेंगे? झूठ बात है कोई भी देश ऐसे बेगैरत, अयोग्य, खुशामदी, और पेटू जवानों से अच्छी आशा नहीं कर सकता है।

एक बार मैंने छोटी बच्ची को अन्धेरे में बिल्ली की आँख चमकती देख कर यह कहते सुना—अम्मा देख, बिल्ली के सिर में दो तारे हैं। एक बालक ने बड़े २ बादलों को देखकर कहा था, देखो देखो ? यह बैल है। उस की आकृति सचमुच बैल जैसी थी। एक छोटी लड़की ने अपने पिता से खेतों पर ओस की बूंद देखकर कहा था हाय ? हाय ? बिचारे रात भर रोये हैं। मैं यह पूछता हूँ-- यह कल्पना, यह उपमा, यह अलंकार क्या साधारण है ! यह विकाश का बीज क्या इन बच्चों की प्रतिभा का द्योतक नहीं है। पर आप क्या समझते हैं, वह कन्या गार्गी और उभय भारती बनकर आर्य रमणियों का गौरव बढ़ायँगी। और ये बालक क्या बड़े होकर व्यास, बाल्मीकी और कालीदास बनेंगे।
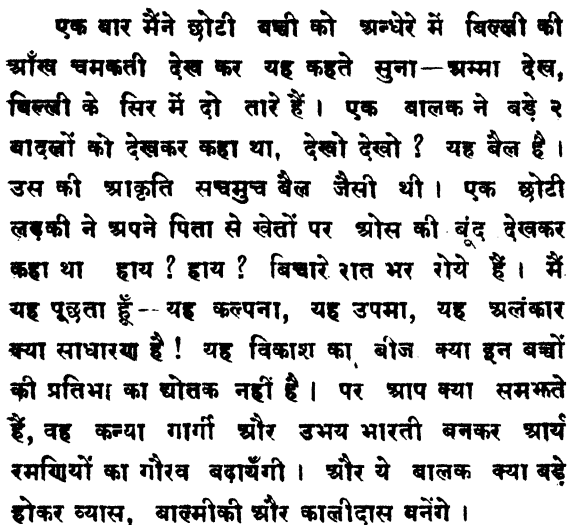
नहीं ? वह कन्या किसी दरिद्र, गुलाम, शिक्षित क्लर्क की जोरू बनकर शीत ठण्ड में झूठे बर्तन माँजती होगी और वह बच्चा किसी आफिस में अफसर की ठोकरों में क्लर्क की कुर्सी पर बैठ, मेज पर झुके हुए काग़ज़ों का मुँह काला कर रहा होगा।

भारत की सन्तान पैदा होते ही क्यों न मर गई। ये नौजवान हाथों में चूड़ी पहन कर क्यों नहीं घर में घुस

बैठते हैं। इनकी माता ने बाँझ होने की दवा क्यों न खाली? भारत प्यासा है! प्यास के मारे तड़प रहा है। यही जवान उसे पानी पिलावेंगे? इन्हीं को इतना हौंसला—रुतबा—और बल होगा? व्यर्थ है, आशा छोड़ो। भारत को मरने दो।

आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द ने कहा था—'स एव देशः सौभाग्यवान् भवति यस्मिन् देशे ब्रह्मचर्यस्य विद्यायाः वेदोक्तधर्मस्य यथायोग्यः प्रचारो जायते।"

आर्य समाज के पिछले नेताओं में स्वर्गीय दर्शनानन्द सरस्वती और महात्मा मुन्शीराम जी ने उक्त आदर्श पर गुरुकुल खोले, पर उनसे आशा पूर्ण न हुई। बराबर १४ वर्ष तक आशा भरी चितवनों से देखने पर अन्त में मालूम हुआ कि गुरुकुल के गौरवान्वित स्नातक ७५) रु० की नौकरी के मुहताज हैं। और फिसल कर वहीं आ गिरे, जहाँ सब। महात्मा हंसराज ने डी० ए० वी० कालेज खोल कर अंगरेज़ी शिक्षा-प्रणाली में कुछ स्वातन्त्र्य उत्पन्न किया और अन्त में पण्डित मदन मोहन मालवीय ने विकट परिश्रम करके काशी में विश्वविद्यालय खोला। पर यह सब क्या था। उन्हीं विषाक्त लड्डुओं पर चाँदी का वर्क था। वहाँ के लड़के भी गुलाम बनें, वहाँ के

विद्यार्थियों ने भी पाश्चात्य प्रणाली के सामने सिर झुकाया।

सरकार ने जब स्कूलों की स्थापना की थी तब उसका उद्देश्य हम समझ नहीं सकते थे—अब समझे हैं। उसे गुलाम क्लर्क चाहिएँ थे। वही क्लर्क उसने पैदा करने को ये कारखाने बना दिये थे। अंगरेज़ सरकार की जीत हुई, उसके मनोरथ सफल हुए, उसने भारत के प्रत्येक जवान को बधिया कर डाला—प्रत्येक जवान को अपना मुहताज, गुलाम, नौकर और आशिक बना लिया।

माँ बापों ने छाती के दूध से बालकों को पोसा, उन्हें शिक्षित, योग्य मनुष्य बनाने के लिए स्कूलों में भेजा, आप भूखे रहे उन्हें पढ़ने का ख़र्चा दिया, आपने चिथड़े पहने, उन्हें साहबी पोशाक बनादी, आपने बर्तन बेचे उन्हें किताब ख़रीद दी। और बड़े चाव से, उत्साह से देखने लगे बेटा पढ़ कर कैसा बन जायगा? कुलदीपक बनेगा। पर जब वह शिक्षित होकर आया, तब क्या देखा गया? इस शिक्षा ने उसकी आँखों की ज्योति मार डाली है, उसकी जवानी का रस पीलिया है, उसे अधमरा बना दिया है। वह किसी काम का नहीं रहा—वह धोबी का

कुत्ता हो गया है। वह अपने देश और धर्म का भी आदर नहीं करता।

जिनके जवान बेटे जनाने हो गये, जिनके जवान बेटे पराई गुलामी करें, जिनके जवान बेटे पराये कपड़े पहनें, पराई भाषा बोलें, पराया काम करें, पराये ढंग से रहें उन माँ बापों को—यदि उनमें ग़ैरत है तो—सँखिया खा लेना चाहिये। इसके सिवा उन्हें अपनी लाज बचाने की और क्या आशा है?

वर्तमान शिक्षा के साथ हमारा चरित्र-स्वास्थ्य और विकास का कुछ सम्बन्ध नहीं है, वे केवल परीक्षा पास कराने की मशीनें हैं। पर दुर्भाग्य से ये मशीनें भी इतनी अल्प हैं—जिन पर हम सन्तोष नहीं कर सकते-इसका ब्योरा सुनिये-सारे सँसार के सभ्य देशों की अपेक्षा भारत की शिक्षा किस दर्जे पर है—

अमेरिका में ९ करोड़ २० लाख आदमी रहते हैं उन में १ करोड़ ६८ लाख विद्यार्थी पढ़ते हैं।

आस्ट्रेलिया में ५० लाख आदमी रहते हैं जिनमें १८ हज़ार विद्यार्थी हैं।

स्विटज़रलैंड में ३५ लाख में ५ लाख २ हज़ार।

संयुक्तराज्य में ४ करोड़ ४२ लाख में ७५ लाख।

नेटाल में ५ लाख ४४ हजार में २६ हजार।

जर्मनी में ६ करोड़ ५० लाख में १० लाख विद्यार्थी पढ़ते हैं, पर भारत में ३१ करोड़ ५० लाख मनुष्यों में ४५ लाख ३ हजार (!!) विद्यार्थी हैं !!

सभ्य संसार के हिसाब से भारत में ६ करोड़ विद्यार्थी होने चाहिए थे, पर हैं कुल ४५ लाख? अर्थात् साढ़े ५ करोड़ बालकों की बुद्धि विकास के लिये देश में कुछ प्रबन्ध नहीं है। यह विवरण प्रारम्भिक शिक्षा का है। अब हाईस्कूलों और कालिजों का हिसाब देखिए—भारत की जन संख्या ३१॥ करोड़ है और अमेरिका की केवल ८॥ करोड़। अर्थात् अमेरिका से चौगुनी के लगभग है। अब दोनों देशों की उच्च शिक्षा की बात सुनिये—

भारत में सिर्फ़ १३० कालिज लड़कों के हैं, पर अमेरिका में ४६३ हैं। हिसाब से चौगुने होकर १९७२ कालिज होने चाहिए थे, पर हैं १३० [?] अमेरिका में लड़कियों के :१३ कालिज १९१० में थे पर उससे चौगुने भारत में केवल ७ !!

भारत में ३२० स्त्रियाँ कालिज में पढ़ती हैं, पर वहाँ १९६७ कालिजों में पढ़ती हैं [?] यहाँ ९९६३४१ स्त्रियाँ हटक़ हटक़ कर कुछ लिख पढ़ सकती हैं

पर अमेरिका में ४३४४८० स्कूलों में पढ़ती हैं, कुल भारत में पढ़े लिखे मर्द १, ४६, ६०, ०८० और स्त्री ६, ३६, ३५१ हैं कुल जोड़ १, ५६, ८५, ४२१ है और बाक़ी २७७७२८४८४ बिलकुल पढ़ पत्थर हैं।

एक बार माननीय पं० मदन मोहन मालवीय जी ने अपने व्याख्यान में कहा था—

"भारत के कुल विश्वविद्यालयों में २८००० विद्यार्थी हैं, पर अमेरिका में २४००० प्रोफेसर हैं।"

सारांश भारत में फी लाख १ आदमी उच्चशिक्षा पाता है, और फ़ी १० लाख में एक को विज्ञान [साईन्स] की शिक्षा दी जाती है !

कहिये—इस पतन की भी कोई हद है ? इसी शिक्षा की उन्नति पर, इसी शिक्षा के बल पर आप ५०० से अधिक मतों और २५३ से अधिक भाषाओं को एकता के सूत्र में बाँध कर युगान्तर उपस्थित करना चाहते हैं ? तब तो आपके साहस की बलिहारी है। निस्सन्देह, ये प्राइमरी स्कूलों के विद्वान्, एकदम मिडिल पास विद्या वारिधि, हज़ारों वर्ष की पुरानी स्वार्थ परता को, हिन्दू मुसलमानों के झगड़ों को तोड़ कर, अछूतों, नीचों, पतितों का उद्धार करके, नव्य भारत की जातीयता को खड़ा कर सकेंगे ?

यह सारे संसार को सब प्रकार की शिक्षा सहायता करने वाले भारत का वर्तमान भयंकर स्वरूप है—जैसा ज़माना आ रहा है—सारे विश्व की शक्तियों में जैसी रगड़ पट्टी मच रही है— उसे देख कर कौन कह सकता है कि भारत की एकान्तता स्थिर रह सकेगी? और यह भी विश्वास नहीं कि सभ्य संसार इसे बोदा-निकम्मा-रोगी-अपाहज समझ कर इस पर तरस खा कर इसे छोड़ दे। क्योंकि वर्तमान सभ्यता का सब से उच्च धर्म्म यह है कि शक्ति हो तो जीवित रहो वरना मर जाओ! बस तो अब भारत की मृत्यु निश्चित है-इस भयंकर रगड़ में-इस-ज़बर्दस्त चहल पहल में-इस भीड़ भड़क्के में भारत अवश्य कुचल जायगा-पिस जायगा!!

तीस कोटि भारत के जवान हट्टे कट्टे पूतो! सावधान होओ! तुम्हारे ६० करोड़ बलिष्ट हाथों की छत्र छाया में भी यदि देश डूब गया तो तुम्हारे अस्तित्व का क्या मूल्य रहा? तुम्हारी इसी सुस्ती में-तैयारी करते करते-ही यदि-यह प्रशस्त शस्यश्यामला भूमि अतल पाताल में जा गिरी, सर्व नाश हो गया और तब चेते तो सब व्यर्थ होगा-अवसर बीते हीरा पत्थर के भाव भी नहीं बिकता। वह स्वर्ण अट्टालिका-वह स्वर्ग सुख-वह जातीयता-वह सौन्दर्य-जो

हमारे करोड़ों पूर्वजों के ज्वलन्त आत्मत्याग-गौरव और प्रतिभा का फल था-नष्ट हो चुका-अब यह बाक़ी है-कि जातीयता का जो बाह्य आडम्बर बाक़ी बचा है-वह भी ध्वंस हो जाय और फिर हमारे पुरखों की हड्डी पहचानने वाला भी कोई संसार में न रहे !

सभ्य संसार में रह कर-सभ्य राज की प्रजा बनकर-सभ्यता में नाम लिखा कर केवल, हैट, कोट पहनने, अंग्रेज़ी बोलने, खड़े हो कर मूतने, सिगार पीने, मेम से ब्याह करने, से ही सभ्यता की मर्यादा को रक्षित नहीं रख सकोगे।

इस बोखलाहट को सारा संसार उपहास की दृष्टि से देखने लगा है, और मोर का पंख लगा कर कौवा कहने लगा है, यही नहीं बल्कि ढेले मार मार कर अपने दल में आये हुओं को तिरस्कार पूर्वक निकालने लगा है, तिस पर भी हम उसी चाल पर चलते रहें- यह बेगैरती नहीं तो क्या है ?

शिक्षा का मूल उद्देश्य मानसिम, शारीरिक और आत्मिक उन्नति करना है। इसी से प्राणी में मनुष्यत्व उत्पन्न होता है। यद्यपि बालक जन्म से बहुत से पैत्रिक संस्कार लेकर आता है। पर वास्तव में वह अयोग्यता और

अविद्या का पुंज ही होता है। माता पिता और गुरु ही उसे योग्य बनाते तथा अविद्या अन्धकार के पर्दे दूर करते हैं। बालक चाहे भी जितने उत्तम संस्कार लेकर जन्मे। चाहे भी जितना हृष्ट पुष्ट और नीरोग हों-बिना विभूतियों और गुणों से युक्त हुऐ वह मनुष्य की पंक्ति में नहीं बैठ सकता।

शिक्षा का प्रधान भाग केवल मनुष्य जाति के लिये है; बिना सिखाए उसे कुछ भी नहीं आता, संसार भर के जानवरों के बच्चे जन्म लेते ही चलने फिरने उड़ने तथा खाने पीने लगते हैं। कुत्ता दो चार दिन में चलने फिरने लगता है। गिद्ध पैदा होते ही ऊपर आकाश में उड़ता है, सार यह है-कि प्रायः सभी संसार के प्राणियों को स्वाभाविक ही कुछ ज्ञान होता है। पर मनुष्य के बच्चों को सब कुछ सीखना पड़ता है। और प्राणि जितनी जल्दी बढ़ते और जिस उम्र में समर्थ हो जाते हैं, उस उम्र में मनुष्य के बच्चे नितान्य असमर्थ रहते हैं। इसका कारण क्या है?

बिल्ली, कुत्ते, बन्दर, आदि को चाहे कोई कितना ही सिखा ले, तो भी वह कोई ऐसा काम न कर सकेगा, जो अन्य बच्चे न कर सकते हों। इससे सिवाय जंगली बन्दर और पालतू बन्दर में-जंगली हिरन और पालतू हिरन में

तोता मैनाओं में सिखाने से वैसा परिवर्तन और भेद नहीं हो सकता जैसा कि जंगली और सुशिक्षित मनुष्यमें होता है। कुत्ते आदि को तैरना आपही आप आजाता है, आख़िरकार कुत्ता एक ही ढंग से तैरता है, पर मनुष्य सीख कर सैकड़ों तरह से तैर सकते हैं, सच तो यों है—मनुष्य कर्तव्य योनि है उसकी रचना ऐसी की गई है कि उसके होन हार की कोई सीमा नहीं। क्योंकि उसमें बुद्धि का विकास है।

वह सब कुछ बिना सिखाये नहीं बनता, इसलिये शिक्षा देना परम आवश्यक है, लोग शिक्षा का ठीक अर्थ न जान कर स्कूल भेज कर कर बड़ी २ डिग्रीएं ही देना या कोई काम सिखाने ही को शिक्षा समझते हैं, पर वास्तव में यहीं पर शिक्षा की सीमा व हद नहीं है।

शरीर में आँख, नाक, कान, मुँह, आदि इन्द्रियाँ और बुद्धि है। उत्पन्न होते ही बच्चा—आँखें खोलता है—हाथ पैर मारता है सुनता है, चीखता है, तभी से सीखना शुरू कर देता है। दर्शन शास्त्री बताते हैं, कि ज्ञान जीव का धर्म है, ज्ञान सब उसके हृदय में है, कोई गुरु किसी को बाहिर से बात किसी के हृदय में नहीं ठूस देता, ज्ञान का बीज उसके हृदय में है, विकास पाकर

वही स्फुटित होता है, गुरु उन परदों को दूर करता है, आत्मा का प्रकाश आत्मा देख पाता है।

बीज में वृक्ष का पूरा आकार है, ज्यों ही हवा, मिट्टी पानी, धूप, गर्मी मिली वह प्रकट होकर विशाल स्वरूप का बन गया। उसी प्रकार ज्ञान का सारा बीज हृदय में है; शिक्षक, समय और अध्यवसाय की जरूरत है, शिक्षा का अच्छा सामान उपस्थित है तो उसी नन्हे से बीज से पर्वताकार वृक्ष निकल आवेगा।

अगर कोई बीज नहीं उगता, जल झुलस कर मर जाता है तो यह उसका दोष नहीं। उसे खाद पानी, गर्मी और अवकाश न मिला होगा। ठीक उसी प्रकार यदि कोई बच्चा मूर्ख, कुपढ़, कुचाली और नीच रह जाता है तो यह उसका दोष नहीं उसे शिक्षा, समय, संस्कार का अभाव रहा।

स्वभाव बड़ा प्रबल गुरु है, संस्कारों से वह सबल और निर्बल होता रहता है, कुसंस्कारों का यदि सम्पर्क न हुआ तो समझो बाजी मारली, वह बढ़ता चला जायगा। नहीं तो गिरता जाएगा। इसलिये स्वभाव का प्रयत्न प्रयत्न होना चाहिए। यह काम गुरु करेगा।

वेद में लिखा है—

'मातृमान् , पितृमान्, आचार्यमान् पुरुषो वेद ।'

इस प्रकार प्रथम गुरु माता है । बच्चे के भविष्य भाग्य रूपी महल की नींव माता ही रखती है । जैसी नींव होगी, वैसा ही बहुमूल्य उसका जीवन बनेगा । इस नियम की परवाह न करके कोई यह कहे कि प्रथम गुरु का काम किसी और से कराया जाए तो यह अनहोनी बात है—क्योंकि बच्चों की शिक्षा स्त्रियों से ही हो सकती है । सो भी सब से अच्छी माता से । संसार में सबसे अनुभवी लोग माता के गुरुत्व की प्रशंसा में जो अपने उद्‌गार अंकित कर गए हैं, वह जल्दी मिटने वाले नहीं हैं ।

जिन्होंने नैपोलियन का नाम सुना है, जिन्होंने वीरवर अभिमन्यु और महावीर कर्ण, अर्जुन की महिमा पढ़ी है, जिनके मस्तिष्क कपिल, गोपीचन्द आदि की स्मृति से दीप्त रहे हैं, उन्हें माता के महत्व को बताना नहीं पड़ेगा । उन सब का वर्णन करना मानों समय नष्ट करना है ।

माता का धर्म है, उस पर भार है कि वह पुत्र का उचित रीति से लालन पालन करे, उनके भावों का समझ कर उत्तम शिक्षा दे । हृष्ट, पुष्ट, सुखी, और अच्छे पुरुष

बनावे। राज प्रबन्ध का काम वैसी ज़िम्मेदारी का नहीं, जैसा कि काम माता की ज़िम्मेदारी का है। माता का आसन उत्तम है। माता का नाम मिटा दो तो संसार पशुओं से परिपूर्ण जंगल रह जाएगा।

सच बोलना, स्वच्छ रहना, समय पर काम करना, सुशील, तथा आज्ञाकारी बनना, यही मा ा की प्रधान शिक्षा है। केवल माता की असवधानी से बच्चों में-जो कुन्दकली के समान स्वच्छ और सुन्दर होते हैं, क्या २ कुत्सित दोष नहीं घुस जाते? और उनका भयंकर परिणाम कौन नहीं जानता।

माता के पास बच्चा लगभग पाँच वर्ष तक ही स्नेह में पलता पोषता है, पीछे पिता के हाथ में आता है, मानों माता ने सुन्दर मिट्टी दे दी, खिलौना बनाने का सरंजाम पिता करता है। जिसको माता ने तैयार किया था-वह पिता पोषित करता है। पिता का कार्य यह है कि—कुल गौरव, स्वच्छ भावनायें, शुभ संकल्प, विनीत, भाव, सच्ची मित्रता, तथा उच्च आशाएँ तथा धार्मिक भावों के बीजों का आरोपण करे, कुल गौरव की स्थापना, के लिए ही आज दिन मूर्ति पूजा घर २ चली है, प्रथम रामायण, महाभारत, गीता की कथा वार्ता घर २ होती थी। उन अप्रतिम राम

कृष्णादि देवों की प्रतिमाएँ बनाकर पिता माता उनके सामने-उनकी पिताकी आज्ञा पालन, सत्यनिष्ठा, धर्मभीरुता, आदि दुर्धर्ष गुणों का कीर्तन किया करते थे और बच्चों के स्वच्छ हृदय पर उस गौरव की उत्तङ्ग लहरें अंकित हुआ करतीं थीं। उनके वैसे ही संस्कार रहते, वैसे हो वे खेल खेलते, वैसे ही कार्य करते थे। आजकल उनके स्थान पर नंगी और गन्दी तस्वीरों से, शौकीन और असदाचारी माता पिताओं के आचरणों से ही बच्चे कुसंस्कारी हो जाते हैं, उनकी भावनाएँ गिर जातीं हैं। और दो वर्ष की ही अवस्था में वे कुचेष्टाएँ करने लगते हैं। क्या यह उनका दोष है? वास्तव में वे माता पिता ही घृणा और धिक्कार के पात्र हैं। जिन्होंने बच्चों की भावनाएँ स्वच्छ नहीं बनाईं। जब उनके भाव ही निकृष्ट हैं, तो संकल्प क्या स्वच्छ होंगे। जिन्होंने विद्या और दूसरी बातों का नाम नहीं सुना, उन्हें क्या विद्वान् और शूर बनने की आकाँक्षा होगी। वे अवश्य उद्दण्ड न होंगे तो विनीत भी न होंगे। अविनीत बालक सच्चरित्र नहीं हो सकता, और चरित्र हीन बालक उच्च नहीं बन सकता। फिर धर्म क्या करेगा।

धार्मिक भावों के स्थान पर आर्य, जैन, सनातन, और ईसाइयत के कट्टर भाव भरना मैं पसन्द नहीं करता।

ऐसा करने से बच्चा अन्धविश्वासी बन जाता है, हमारे देश में क्या–सारे संसार में। झूठे मत इतने न प्रचलित होते, यदि बच्चों के कच्चे मस्तिष्क में वे भाव न भर जाते, और उसे बिना बिचारे ही उन्हें स्वीकार करने को लाचार न किया जाता। फिर उन्हें दूसरे धर्म की सचाई समझने में संकोच झिझक रहता है। कितने ही मनुष्य ऐसे हैं जो खुले दिल से बात नहीं कह सकते, उसका कारण उसी मूर्ख शिक्षा का कुफल है। इसलिए उन्हें सार्वभौम धर्म बताना चाहिए। जैसे प्राणिमात्र पर दया करो, दीनों को हृदय लगाओ, जो नीच हैं उन्हें बुरा मत कहो, प्रेम पूर्वक सबसे वर्ताव करो, ईश्वर को सर्वत्र जानो, इत्यादि ऐसी बातें हैं जिनका सच्चा सिक्का मस्तिष्क पर बैठ जाए तो वह लड़का बड़ा होकर सच्चा धर्म ढूंढ निकालेगा। और उसकी तीसरी पीढ़ी पर संसार में सार्व भौम एक ही धर्म होगा जो किसी को अहितकर न होगा।

पिता के बाद आचार्य के पास बच्चे को जाना होता है, इसका काल अधिक से अधिक १० वर्ष होना चाहिए। यहाँ उसके सब भावों की शाखा प्रशाखा निकलती हैं। अब तक पूर्वाचार्यों से उसने जो कुछ पढ़ा सीखा है वह पुष्ट होता है। वहां की प्रधान बातें यथार्थ ज्ञान, संयम, सार्वजनिक

हित, निरालस्यता, स्पष्टवादिता, और कुतर्क हीनता हैं। ये सब बातें यहाँ धीरे २ पुष्ट होतीं हैं। बच्चा योग्य बनता जानता है, आचार्य की वाणी से उसे सत्य ज्ञान मिलता है, और अविद्यान्धकार नष्ट होता है, उसकी सेवा से गर्व और मान नष्ट होता है-तथा ब्रह्मचर्य से शरीर, मन, पुष्ट होता है। और एकान्त वास से आत्मा--वाणी एक निष्ठ बन जाती है।

इस प्रकार काय, मन, वचन से ज्ञान और शान्ति का संग्रह कर के वह वीर अपने कुल का तिलक होकर जगत् में विचरण करता है। उसे उच्चता से रोकने वाला कोई नहीं है। यही शिक्षा का सुफल है। यही शिक्षा का उच्चतर दुर्ग है।

प्राचीन भारतीय परिपाटी के अनुसार जब बालक को विद्यारम्भ कराया जाता था तब उसे यज्ञोपवीत देकर यह उपदेश दिया जाता था—

"तू आज से ब्रह्मचारी है, नित्य सन्ध्योपासन कियाकर, भोजनके पूर्व शुद्ध जल का आचमन कियाकर। दुष्ट कर्मों को छोड़ धर्म किया कर। दिन में शयन कभी मत कर। आचार्य के आधीन रह के नित्य साङ्गोपाङ्ग वेद के लिये बारह २ वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य अर्थात् ४८ वर्ष तक वा जब

तक साङ्गोपाङ्ग चारों वेद पूरे होवें तबतक अखण्डित ब्रह्म-चर्य धारण कर। आचार्यके आधीन धर्माचरण में रहा कर। परन्तु यदि आचार्य अधर्माचरण वा अधर्म करने का उपदेश करे उस को तू कभी मत मान। और उसका आचरण मत कर। क्रोध और मिथ्या भाषण करना छोड़ दे। आठ प्रकार के मैथुन को छोड़ देना। भूमि में शयन करना। पलङ्ग आदि पर कभी न सोना। कौशीलव अर्थात् गाना, बजाना, तथा नृत्य आदि निन्दित कर्म, गन्ध और अञ्जन का सेवन मत कर। अति स्नान, अति भोजन, अधिक निद्रा, अधिक जागरण, निन्दा, मोह, भय, शोक, का ग्रहण कभी मत कर। रात्री के चौथे प्रहर में जाग, आवश्यक शौचादि दन्तधावन, स्नान, सन्ध्योपासन, ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना, योगाभ्यास, का आचरण नित्य किया कर। क्षौर मत कर। मांस, रूखा, शुष्क, अन्न मत खावे, और मद्यादि मत पीवे। बैल, घोड़ा, हाथी, ऊंट आदि की सवारी मत कर। गांव में निवास, जूता और छत्र का धारण मत कर। लघुशङ्का के बिना उपस्थ इन्द्रिय के स्पर्श से वीर्य स्खलन कभी न करके वीर्य को शरीरमें रख के निरन्तर ऊर्ध्व रेता बन, अर्थात् नीचे वीर्य को मत गिरने दे, इस प्रकार यत्न से वर्ता कर। तैलादि से

अङ्ग मर्दन, उबटना करना, अति खट्टा-इमली आदि, अति तीखा-लाल मिरच आदि, कसेला-हरड़ आदि, क्षार—लवण आदि और रेचक-जमालगोटा आदि द्रव्यों का सेवन मतकर। नित्य युक्ति से आहार विहार करके विद्या ग्रहण में यत्नशील हो। सुशील, थोड़ा बोलनेवाला हो, सभा में बैठने योग्य गुण ग्रहण कर। मेखला और दण्डका धारण, भिक्षा चरण, अग्निहोत्र, स्नान, सन्ध्योपासन, आचार्य का प्रियाचरण, प्रातः सायं आचार्य को नमस्कार करना, ये तेरे नित्य करनेके और जो निषेध किये वे नित्य न करने के कर्म हैं।

'यान्यनवद्यानि कर्माणि। तानि सेवितव्यानि। नो इतराणि। यान्यस्माकँ सुचरितानि। तानि त्वयोपास्यानि। नो इतराणि। एके चास्मच्छ्रेयाँसो ब्राह्मणः। तेषां त्वया सनेन प्रश्वसितव्यम् ॥१॥ तैत्तिरी० प्रपा० ७। अनु० ११।

ऋतं तपः सत्यं तपः श्रुतं तपः शान्तं तपो दमस्तपश्शमस्तपो दानं तपो यज्ञस्तपो ब्रह्म भूर्भुवः सुवर्ब्रह्मै तदुपास्वै तत्तपः ॥२॥ तैत्तिरी० प्रपा० १०। अनु० ८॥

अर्थ—हे शिष्य! जो आनन्दित, पाप रहित अर्थात् अन्याय अधर्माचरण रहित, न्याय धर्माचरण सहित कर्म हैं; उन्हीं का सेवन तू किया करना। इनसे विरुद्ध अधर्माचरण कभी मत करना। हे शिष्य! जो तेरे माता

पिता आचार्य आदि लोगों के अच्छे धर्म युक्त उत्तम कर्म हैं, उन्हीं का आचरण तू कर और जो उनके दुष्ट कर्म हों उनका आचरण कभी मत कर। हे ब्रह्मचारिन्? जो उनके मध्य में धर्मात्मा श्रेष्ठ ब्रह्मवित् विद्वान् हैं. उन्हीं के समीप बैठना, संग करना और उन्हीं का विश्वास किया करना।

हे शिष्य! तू जो यथार्थ का ग्रहण, सत्य मानना, सत्य बोलना, वेदादि सत्य शास्त्रों का सुनना, अपने मन को अधर्माचरण में न जाने देना, श्रोत्रादि इन्द्रियों को दुष्टाचार से रोक श्रेष्ठाचार में लगाना, क्रोधादि के त्याग से शांत रहना, विद्या आदि शुभ गुणों का दान करना, अग्निहोत्रादि करना और विद्वानों का सङ्ग कर जितने भूमि, अन्तरिक्ष और सूर्यादि लोकों में पदार्थ हैं-उनका यथा-शक्ति ज्ञान प्राप्त कर, और योगाभ्यास-प्राणायाम द्वारा एक ब्रह्म परमात्मा की उपासना कर, ये सब कर्म करना ही तप कहाता है ॥२॥

ऋतञ्च स्वाध्याय प्रवचनेच। सत्यञ्च स्वाध्याय प्रव-चनेच। तपश्च स्वाध्याय०। दमश्च स्वध्याय। शमश्च स्वध्याय०। अग्नयश्च स्वाध्या०। अग्निहोत्रञ्च स्वाध्या०। सत्य मिति सत्यवचारा थीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरु शिष्टिः। स्वाध्याय प्रवचने एवेति नाकोमौद् गल्यः।

तद्धि तपस्तद्धि तपः ॥ ३ ॥ तैत्तिरी० प्रपा० ॥ ७ ॥ अनु० ॥ ६ ॥

अर्थ—हे ब्रह्मचारिन्: तू सत्य धारण कर, पढ़ और पढ़ाया कर। सत्योपदेश करना कभी मत छोड़, सदा सत्य बोल, पढ़ और पढ़ाया कर। हर्ष शोकादि छोड़, प्राणायाम-योगाभ्यास कर, तथा पढ़, और पढ़ाया कर। अपनी इन्द्रियों को बुरे कामों से हटा, अच्छे कामों में चला, विद्या का ग्रहण कर और कराया कर। अपने अन्तःकरण और आत्मा को अन्यायाचरण से हटा न्यायाचरण में प्रवृत्त कर और करायाकर, तथा पढ़ और पढ़ाया कर। अग्नि विद्या के सेवन पूर्वक विद्या को पढ़ और पढ़ाया कर। अग्नि होत्र करता हुआ पढ़ और पढ़ाया कर। सत्यवादी होना तप सत्य वचन न्यायाचरण में कष्ट सहना, तप नित्य पौरुशिष्टि आचार्य और धर्म में चल के पढ़ना पढ़ाना और सत्योपदेश करना ही तप है। यह नाको मौद्गल्य आचार्य का मत है और सब आचार्यों के मत में यही पूर्वोक्त तप है, ऐसा तू जान ॥ ३ ॥ इत्यादि उपदेश तीन दिन के भीतर आचार्य वा बालक का पिता करे। बालक का पाठ्यक्रम ऋषि दयानन्द ने प्राचीन परिपाटी पर इस भाँति लिखा है—

पाणिनी मुनि कृत वर्णोच्चारण शिक्षा १ एक महीने

के भीतर पढ़ा देवें। पुनः पाणिनो मुनि कृत अष्टाध्यायी का पाठ पदच्छेद अर्थ सहित ८ आठ महीने में, अथवा १ वर्ष में पढ़ा कर धातु पाठ और १० दश लकारों के रूप साधवाना तथा दश प्रक्रिया भी साधवानो, पुनः पाणिनो मुनि कृत लिङ्गानुशासन और उणादि, गण पाठ तथा अष्टध्यायीस्थ ण्वुल और तृच् प्रत्याद्यन्त सुबन्त रुप ६ छः महीने के भीतर सधवा देवें, पुनः दूसरी बार अष्टाध्यायी पदार्थोक्ति समास शंका समाधान उत्सर्ग अपवाद अन्वय पूर्वक पढ़ायें। और संस्कृत भाषण का भी अभ्यास कराते जाँय, ८ महीने के भीतर इतना पढ़ना पढ़ाना चाहिये।

तत्पश्चात् पतञ्जलि मुनिकृत महाभाष्य-जिसमें वर्णोच्चारण शिक्षा, अष्टाध्यायी, धातु पाठ, गण पाठ, उणादि गण, लिङ्गानुशासन, इन ६ छः ग्रन्थों की व्याख्या यथावत् लिखी है, डेढ़ वर्ष में अर्थात् १८ अठारह महीनों में इसको पढ़ना इस प्रकार शिक्षा और व्याकरण शास्त्र को ३ वर्ष ५ पाँच महीने वा ६ महीने अथवा ४ वर्ष के भीतर पूरा कर सब संस्कृत विद्या के मर्मस्थलों को समझने के योग्य होवे, तत्पश्चात् यास्क मुनिकृत निघण्टु, निरुक्त तथा कात्यायनी मुनि कृत कोश १॥ डेढ वर्ष के भीतर पढ़कर अव्ययार्थ आप्तमुनिकृत वाच्यवाचक सम्बन्धरूप यौगिक

योगरूढ़ि और रूढ़ि तीन प्रकार के शब्दों से अर्थ यथावत् जानें। तत्पश्चात् पिङ्गलाचार्य कृत पिङ्गल सूत्र छन्दो-ग्रन्थ भाष्य सहित ३ महीने में पढ़ और तीन महीनेमें श्लोकादि रचन विद्या को सीखें, पुनः यास्क मुनि कृत, काव्यालंकार सूत्र, वात्स्यायन मुनिकृत भाष्य सहित आकांक्षा, योग्यता आवृत्ति, और तात्पर्यार्थ, अन्वय सहित पढ़के इसी के साथ मनुस्मृति,विदुर नीति,आदि और किसी प्रकरणमें के १० सर्ग बाल्मीकीय रामायण के-सब १ वर्षके भीतर पढ़ें और पढ़ावें तथा एक वर्षमें सूर्य सिद्धान्तादि में से किसी एक सिद्धान्त से गणित-विद्या जिसमें बीज गणित. रेखा गणित और पाटी गणित, जिसको अङ्क गणित भी कहते हैं पढ़े, और पढ़ावे। निघण्टु से लेके ज्योतिष पर्यन्त वेदाङ्गों को चार वर्ष के भीतर पढ़े। तत्पश्चात् जैमिनी मुनि कृत सूत्र पूर्वमीमांसा को, व्यास मुनि कृत व्याख्या सहित, कणाद मुनि कृत वैशेषिक सूत्र रूप शास्त्र को. गौतम मुनि कृत प्रशस्त वाद भाष्य सहित, वात्स्यायन मुनि कृत भाष्य सहित गौतम मुनि कृत सूत्र रूप न्याय शास्त्र, व्यास मुनि कृत भाष्य सहित, पतञ्जलि मुनि कृत योग सूत्र योग शास्त्र, भागरी मुनि कृत भाष्य युक्त कपिलाचार्य कृत सूत्र रूप सांख्य शास्त्र, जैमिनि वा बौद्धायन आदि मुनि कृत

व्याख्या सहित, व्यास मुनि कृत शारीरिकसूत्र तथा ईश, केन, कठ, प्रश्न, मण्डक, माण्डूक, ऐतैरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य और बृहदारण्यक, १० दश उपनिषद् व्यासादि मुनि कृत व्याख्या सहित वेदान्त शास्त्र। इन ६ शास्त्रों को २ वर्ष के भीतर पढ़ लेवे। तत्पश्चात् ऐतरेय ऋग्वेद का ब्राह्मण। आश्वलायन कृत श्रौत तथा गृह्य सूत्र और कल्प सूत्र, पद क्रम और व्याकरणादि के सहाय के छन्द-स्वर पदार्थ अन्वय भावार्थ सहित ऋग्वेद का पठन ३ तीन वर्ष के भीतर करे। इसी प्रकार यजुर्वेद को शत पथ ब्राह्मण और पदादि के सहित, सामवेद को २ दो वर्ष, तथा गोपथ ब्राह्मण और पदादि के सहित अथर्व वेद को दो वर्ष के भीतर पढ़े। सब मिल के ६ वर्षों के भीतर २ चारों वेदों को पढ़ना और पढ़ाना चाहिये। पुनः ऋग्वेद का उपवेद आयुर्वेद, जिसको वैद्यक शास्त्र कहते हैं। जिसमें धन्वन्तरि कृत सुश्रुत और निघण्टु तथा पतञ्जलि ऋषि कृत चरक आदि आर्षग्रन्थ हैं इनको ३ वर्ष में पढ़े। जैसे सुश्रुतादि में शस्त्र लिखें हैं-बना कर सब शरीर के अवयवों को काट कर देखें। उसमें शारीरिक विद्या को साक्षात् करे। तत्पश्चात् यजुर्वेद का उपवेद धनुर्वेद जिसको शस्त्रास्त्र विद्या कहते हैं। जिसमें अङ्गिरा आदि ऋषि कृत

ग्रन्थ हैं, जो इस समय बहुधा नहीं मिलते, ३ वर्ष में पढ़े और पढ़ावे। पुनः सामवेद का उपवेद गन्धर्ववेद जिसमें नारद संहितादि ग्रन्थ हैं। उनको पढ़ के स्वर, राग, रागिणी समय, वादित्र, ग्राम, ताल, मूर्छना, आदि का अभ्यास करे।

तत्पश्चात् अथर्व वेद का उपवेद अथर्ववेद जिसको शिल्प शास्त्र कहते हैं। जिसमें विश्वकर्मा, त्वष्टा और मयकृत संहिता ग्रन्थ हैं। उनको ६ वर्ष के भीतर पढ़ के विमान तार, भूगर्भादि विद्याओं को साक्षात् करे। इन शिक्षा से लेके आयुर्वेद तक १४ चौदह विद्याओं को ३१ वर्षों में पढ़के महा विद्वान् होकर अपने और सब जगत् के कल्याण और उन्नति करने में प्रयत्न किया करे।"

यह क्रम एक चमत्कारिक क्रम है और इस पर विचार करने की मैं प्रत्येक हिन्दु विद्वान् से अपील करता हूँ।

मैं खुले तौर पर यह कहना चाहता हूँ कि यदि बालक का पालन पोषण और शिक्षा का उचित प्रबन्ध न हो तो इसे जन्म देने से क्या लाभ है? परन्तु यह प्रश्न साधारण नहीं। बच्चों के लिये उत्तम खाद्य, रहने का स्थान, शिक्षा के लिये द्रव्य इन सबकी आवश्यकता राष्ट्र को पूरी करनी होगी। यह माता पिता के लिये करना आवश्यक है।

अब प्राचीन भारत जैसे गुरुकुल नहीं रहे न अब वह समय है। न अब डारविन और माल्थस का समय है। आज सारी पृथ्वी मनुष्यों से भर गई है। गत वर्षों में श्रेष्ठ जातियों की जन वृद्धि रोकी गई है। इस रोक का अर्थ यह है कि उतनी ही सन्तान उत्पन्न की जाय—जितनी का पालन पोषण तथा शिक्षा राष्ट्र कर सके।

यदि ऐसा न किया जायगा तो नेपोलियन के कथनानुसार राष्ट्रों को बद हज़मी का रोग हो जायगा जिससे उसकी मृत्यु की ही सम्भावना है।

———

अध्याय चौथा

——:❀❀:——

नागरिक जीवन की सम्हाल।

——:●:——

यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि देहातों की अपेक्षा कस्बों और नगरों में युवक लड़के लड़कियाँ अधिक बिगड़ते हैं। नगरों में भी पुराने निवासियों पर वहाँ की चमक दमक का उतना आकर्षक प्रभाव नहीं पड़ता, जितना कि किसी देहाती पर—एका एक नगर में आ जाने पर।

गांव के सीधे साधे लड़के-अपने गांव के छोटे स्कूल की पढ़ाई समाप्त करके जब निकट के कस्बे के टाउन स्कूल में आते हैं तो उन्हें वहाँ कुछ चमत्कार सा दीखता है। अच्छी२ इमारतें, मेज, कुर्सी, ठीक तराश के कपड़े और चटपटे शहरी साथी और चाय पानी। वे प्रथम कुछ संकोच में रहते हैं

फिर सब में मिल जाते हैं, शहर के कुछ लुच्चे लड़के अपना उल्लू साधते, कुछ ठगने या उनसे अप्राकृत पाप करने के लिये उन से मीठी २ बातें बनाकर दोस्ती जनाते, उनके लिये कुछ खर्च करते और उन्हें फाँस कर अपने रङ्ग में रग देते हैं। पतन का मार्ग इतना सरल है कि एक बार आदमी उस पर पड़ कर फिर रुक नहीं सकता है, चलेही जाता है। ये लड़के शीघ्र ही उन में मिल जाते हैं और दुर्गुणों में फँस जाते हैं—क्योंकि ये प्रायः भोले होते है—इन्हें कुछ तजुर्बा भी नहीं होता। ये माता पिता की तरफ से सावधान भी नहीं किये जाते और कोई हितैषी इनकी सम्हाल भी नहीं रखता। बोर्डिंगमें रहने वाले लड़के परस्पर प्रीति करने लगते—स्पर्शास्पर्श बढ़ाते-एक शैया पर सोते—परस्पर छेड़ते और अन्त में अप्राकृत दुर्व्यसनों से फँस जाते हैं।

एका एक किसी ऐसे लड़के के चेहरे की चमक मारी जाय, आवाज़ खरखरी और भारी हो जाय। उसमें भीरुता और एकान्त प्रियता आ जाय। स्फूर्ति और आनन्द-मय मस्ती नेत्रों में न रहे। प्रातःकाल देर से उठने लगे। पाख़ाने में देर तक बैठा रहे। स्नानकरने और शुद्ध रहने में लापरवाह हो जाय। पढ़ने में और क्लास में फिसड्डी हो

जाय तो समझ लीजिये, वह दुर्व्यसनों में फँस गया है, वह अवश्य वीर्य बाहर फेंकने लगा है। माता पिता को उचित है कि उस लड़के की शिक्षा बन्द करके उसे किसानी या किसी परिश्रम के धन्धे में लगा दे। कुछ परवा नहीं यदि उनका बेटा मूर्ख रह जायगा। मगर वह जीता जागता मेहनती और कमाऊ तो बना रहेगा?

कालेज जाकर विद्यार्थियों के जीवन में रस पड़ जाता है-कालेज के कोर्स की किताबों में जब टेनी सन और सैक्सपियर के प्रेम प्याले वे स्वाद ले लेकर पीते हैं, होस्टल के स्वच्छ कमरे में, गुदगुदे फूल के समान पलंग पर पड़े हुये, भर जवानी की उम्र में जब वे उक्त काव्यों और कथाओं की संगमर्मर के समान श्वेत या गुलाब के समान कोमल और चाँदनी के समान स्वच्छ प्रेम पुतलियों की मनही मन में तस्वीर बनाते हैं—नीली आँखों को अन्धेरे में घूरते, सुनहरी वालों से स्वप्न में खेलते, कल्पनाओं के राज्य में कोर्टशिप करते हैं। तब वे अपने संयम और मन की पवित्रता को नहीं बनाये रह सकते। धीरे २ कुछ उनके अन्तरंग मित्र बन जाते हैं ये लोग वे होते हैं जो साल दो साल प्रथम उस स्वप्न रस को चख चुके होते हैं और अब उन्होंने इधर उधर सचमुच एक दो घूंट चोरी छिपे

पी लेने का कुछ बन्दोबस्त कर लिया है। वे लोगप्रथम तो आपस में हँसी दिल्लगी करते हैं। कालेज में आने जाने वाली-मजूरिन-नौकरनी आदि पर आँख लड़ाने की झूंठ मूठ गप्पें लड़ाते हैं—और उपहास करते है। फिर रास्ते चलती स्त्रियों, पार्कों में घूमने वाली मिसों, लेडियों की आलोचना का नम्बर आता है—उसके बाद नाटक थियेटर बाइस्कोप के प्रसंग आते हैं जहाँ अनेकों निर्लज्ज दृश्य खुल्लम खुल्ला देखने और खुश होने को मिलते हैं। चरित्र और मानसिक बल बहुत दुर्बल हो जाता है। शीघ्र ही पुराने मित्र एक दिन खुल पड़ते हैं और वे अपनी गोपनीय जान (?) के कोठे पर उन्हें एक बार जरा मजाक के लिये ले जाते हैं—फिर तो हर कोई स्वयं ही पहुँच जाता है।
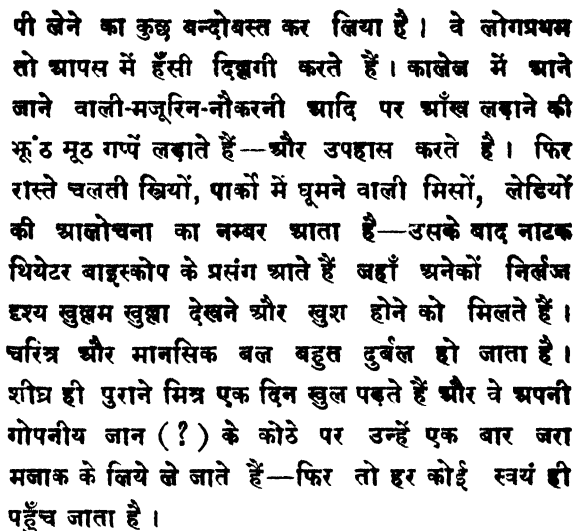
नाटक, थियेटर, वाइस कोप और गन्दे उपन्यास तथा दूसरी फौश पुस्तकें नागरिक जीवन का सब से अधिक ख़तरनाक रूप है। छोटे दर्जे के लोग, और कच्ची उम्र के स्त्री पुरुषों पर इनका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। व्यर्थ उनकी काम वासना भड़क उठती है। प्रत्येक माता पिता और अभिभावक को उचित है कि वह अपने घर की बहू बेटियों और बच्चों को इन गन्दे मनोरंजनों से बचावे। कोई भी

तमाशा थियेटर पहले स्वयं देखले और सबको दिखानेयोग्य हो तब दिखावे। सच्चा मनोरञ्जन गायन-चित्रकला, जंगल बगीचा-नदी किनारे भ्रमण-या बाल-बच्चों में हास्यविलास है—प्रत्येक गृहस्थ को ऐसे मनोरंजन समय २ पर करते रहने चाहिये कि जिससे स्त्री बच्चों का जी घरसे ऊब न जाय। और वे मनोरंजन के लिये गन्दे उपन्यास या थियेटर आदि देखने की ओर रुचि न चला सकें।

छोटे बच्चों के बिगाड़ने वाले घरके नौकर होते हैं। इन का पूरा २ ध्यान रखना चाहिये। कहार, धीमर, खिदमतगार कोचवान—माली आदि देख भाल कर बालबच्चे दार और अच्छे आदमी रखने चाहिये। ये लोग पैसा चुराने से अपनी शिक्षा शुरू करते हैं। बच्चों से पैसा चुरवा २ कर मिठाई का लालच देते हैं—पीछे उन्हें तरह २ से फुसला कर उन में हिल मिल जाते हैं—बहुधा उन्हें अपनी कोठरियों में ले जाते हैं और उन्हें कुत्सित चेष्टा सिखाते हैं और फिर उनसे अप्राकृत व्यवहार करते हैं। ये बालक फिर सदा इन नौकरों से डरते और इनके अधीन रहने लगते हैं। मालिकों को इन पर कड़ी दृष्टि रखनी चाहिये।

बहुधा चलते पुर्जे मेहमान लोग शहरों की सैर करने आते हैं। ये सब निबटे हुये हजरत होते हैं। रात को

सैर को चलती वक्त ये घर के किसी आदमी को साथ चल कर सैर कराने का आग्रह करते हैं। बहुत करके घर के लोग अपने सीधे साधे युवा पुत्र को साथ भेज देते हैं। ये अनजान हजरत दोही चार दिन में उस लड़के को ठीक २ सैर की चाट लगा जाते हैं।

पास पड़ोस के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार की बातें बराबर होती रहती हैं। ख़ास कर पड़ौस की विधवा और कन्याओं पर बड़े शहरों में हमेशा पड़ौसी युवकों की और उनके पास आने वाली मित्र मण्डली की कुदृष्टि रहती है। प्रत्येक गृहस्थ को इन सब बातों की यथावत् सम्हाल रखनी निहायत जरूरी है।

अध्याय छठा

——:o:——

धार्मिक शिक्षा और सात्विक जीवन

—:×:—

केवल ११ वर्ष की अवस्था में धर्म के नाम पर सिर कटाने वाले और दीवार में जीते चिने जाने वाले बालकों का जब मैं ध्यान करता हूँ तब यह विचार होता है कि क्या ऐसी पवित्र, दृढ़ और सात्विक शिक्षा सार्वजनिक रूप से मनुष्य समाज के लिये सम्भव भी है? किस लिये महा समर्थ राम पिता के इतने आज्ञाकारी और मर्यादा भीरु हुये? ध्रुव और प्रह्लादने, शुक और सनत्कुमारों ने वह पवित्र सम्मान प्राप्त किया जो सिद्ध तपस्वियों तक को दुर्लभ था। केवल धार्मिक शिक्षा और सात्विक जीवन की सद् व्यवस्था ही उन्हें इतना दिव्य बना सकी थी।

आज हम स्कूल के किराये के टट्टू मास्टरों के ऊपर सुकुमार बच्चों की शिक्षा का भार सोंप कर निश्चिन्त हो जाते हैं। और वे लोग उसे बेत और गालियों की सहायता से यथा समय सब कुछ सिखा देते हैं—। प्रायः कुचेष्टाएँ स्कूल से ही सीखी जाती हैं। कैसे खेद की बात है कि पिता अपने पुत्रों को परीक्षा में पास होने के लिये तो इतनी कड़ाई का बन्दोबस्त करतेहैं—परन्तु उन में सद्गुणों और उच्चता के भाव उत्पन्न होने की तरफ़ कुछ भी ध्यान नहीं देते।

सत्य भाषण, बड़ों का सत्कार, नम्रता, दया, लज्जा प्रेम और सुशीलता का बीज बच्चों में स्वभाव से ही होता है। यदि उन्हें भय दिखा कर साधारण बातों पर झूठ बोलने को लाचार किया न जाय—उनसे निकम्मी ठठोलिया न की जाँय। उन्हें शासन में किन्तु प्रेम पूर्वक रखा जाय। उन्हें रोगियों की सेवा—अनाथों से प्रेम, दरिद्रों की सहायता की ओर प्रवृत्त कराया जाय तो प्रत्येक बालक एक महान् पुरुष बन सकता है।

परन्तु इसके स्थान पर होता यह है कि माता पिता खूब दिल्लगी में 'पुत्र से काली गोरी बहू की' और कन्याओं से 'काने कुबड़े दूल्हे' की बात अवश्य करते हैं। पिता के

मित्रगण बहुधा पिता की मूँछें उखाड़ने—डण्डे मारने—गाली देने की शिक्षा देते हैं।

इन सब का क्या परिणाम होता है—इस पर वे कभी विचार नहीं करते। बहुधा नंगे लड़के लड़कियों में मिल कर खेलते हैं—और अनेकों कुचेष्टाएँ अपनी शिश्नेन्द्रियों के द्वारा करते हैं। मूर्ख मा बाप देख भी लेते हैं तो हंस देते हैं।

घरों में देवताओं और पूर्वजों की प्रतिमाओं को स्थापित करने का मुख्य अभिप्राय यही था कि उनके चरित्रों को समय २ पर सुन कर बच्चों को उधर आकर्षित कराया जाय—और उन महान् चरित्रों की बच्चों के चरित्रों पर छाया डाली जाय। परन्तु बहुधा ऐसे उदाहरण देखने को मिले हैं कि पिता देवदर्शन को चलने लगे—और गृहिणी ने आग्रह पूर्वक बच्चे को लेजाने को कहा—प्रथम यो यही जवाब दिया गया कि वहाँ—कोई नाच तमाशा तो है नहीं, मन्दिर में इस इल्लत को किस लिए साथ लेकर जाऊँ? परन्तु स्त्री और बच्चे की हठ से लेभी गये तो मन्दिर में जा कर एक पैसा बच्चे को दे कर मूर्ति पर चढ़ाने को दिया और चले आये। दूसरे ही दिन किसी रण्डी के नाच की महफिल का न्योता आया—आप भी बढ़िया वस्त्र पहन

चिल्लेदार दुपट्टा कन्धे पर डाला-पान खाया, इतर लगाया और बच्चे को सलमे की टोपी और रेशमी फूलदार वस्त्र पहना कर ले गये। वेश्या मटकती आई। खुद पान की तश्तरी और इत्र दान ले कर खड़े हो गये। बेटे के हाथ में रुपया देकर कहा—'बेटे, उंगली पर रख कर देना।'

अब बच्चे को विचारने का समय आया—वह सोचता है—वहाँ मन्दिर में गये थे-तब बढ़िया वस्त्र भी नहीं पहने थे। वहाँ इतनी रौनक भी नहीं थी। उसके पिता जी ने इतनी खातिर भी न की थी। वहाँ एक पैसा चढ़ाया था-यहाँ एक रुपया? जरूर वह छोटी देवी थी और यह बड़ी देवी है।

पाठक! आप सोचें कि ये संस्कार अबोध बालक के हृदय पर क्या प्रभाव डाल सकते हैं? एक समय था जब घर २ हवन यज्ञ होते थे- ऋषि महात्मा आया करते थे-और गृहस्थ अपने बच्चों को उनकी चरण रज देकर कृतार्थ होते थे। सिर्फ वातावरण से ही बच्चे वीर, तेजस्वी और धर्मात्मा बनते थे। पर अब सब कर्म काण्ड नष्ट हो गये। पिताओं के चरित्र भी डूब गये। मनुष्य में कामक्रोध लोभ मोह की इतनी माया बढ़ गई कि सैर सपाटे के अव-

सर पर अकसर बच्चों को खेल—सीनेमा आदि में ले जाया जाता है। स्वच्छ वायु, बगीचा और प्राकृत सुन्दर स्थानों पर उन्हें बहुत कम जाने का अवसर मिलता है—और उन्हें उन सुन्दरताओं के सम्बन्ध में कुछ बताया तो जाता ही नहीं है। इसलिए वे तमाशे देखने के शौक़ीन हो जाते हैं। और हवा खोरी पसन्द नहीं करते।

बच्चों के वस्त्र भी अनावश्यक चटकीले और ऐसे बनाये जाते हैं कि उनके मन में व्यर्थ का घमण्ड और बनावट का भाव पैदा हो जाता है—वे गरीब बच्चों से अपने को उच्च समझते और उन्हें चढ़ाते हैं। गरीब बच्चे उनसे जलते और ईर्षा करते हैं। कभी उन्हें प्रेम और सहानुभूति से रहने की ही शिक्षा नहीं दी जाती।

अध्याय सातवां

सदाचार।

—:o:—

मानव-समाज की सब से बहुमूल्य वस्तु आचार है। लोग यह कहते हैं कि संसार में विद्या सब से श्रेष्ठ है, विद्या के सन्मुख संसार की समस्त सम्पदाएं और शक्तियां झुक जाती हैं। परन्तु मैं कहता हूँ कि आचार एक ऐसी वस्तु है जिसके सन्मुख विद्या का मस्तक झुक जाता है। प्रारम्भ में लोग धन शक्ति या विद्या के द्वारा सम्मान पाते हैं—परन्तु यदि वे अचारवान् नहीं निकलते हैं तो शीघ्र उनका पतन होता है और उनकी शक्ति, विद्या और धन किसी तरह उन्हें सम्मानित नहीं कर सकता। संसार का सब से अधिक नीच दुराचारी रोम का बादशाह नीरो था, जब रोम

महानगरी जल रही थी-तब यह मजे से बांसुरी बजा रहा था, इसने अपनी माता, पुत्री और बहिन तक से भी दुष्कर्म किया। लाखों मनुष्यों को सिंह आदि जन्तुओं से फड़वा डालना इसका नित्य का मनोरञ्जन था। तिस पर भी यह पिशाच उस समय का समस्त रोम भर में सब से श्रेष्ठ विद्वान् और तत्ववेत्ता था! रावण के विषय में प्रत्येक हिन्दू जानता है—यह व्यक्ति महात्मापुलस्त्य ऋषि का नाती और कुबेर का सम्बन्धी था। उच्च श्रेणी के ब्राह्मण वंश में था। राजनीति और वेदों का धुरन्धर पण्डित था—इसने वेदों पर अलौकिक भाष्य किया है। भगवान् राम ने आग्रह पूर्वक लक्ष्मण को इस के पास मृत्युकाल में नीति-शिक्षा प्राप्त करने भेजा था। इसके परिवार में विभीषण जैसे धर्मात्मा और सुलोचना जैसी पतिव्रता स्त्रियाँ थीं। इस की सामर्थ्य और वैभव की तो कोई हद न थी। फिर भी यह आदमी घोर दुराचारी था, लम्पटता के कारण वह श्रेष्ठ कुल का होने पर भी राक्षस कहलाया और बन्धु बान्धवों के साथ मारा गया।

भगवान् राम सच्चे अचारवान् पुरुष थे, उन्होंने कठिन से कठिन समय पर भी अपना बड़प्पन प्रगट किया था। कृष्ण को भी मैं परम श्रेष्ट आचारवान् समझता हूँ। जो

पुरुष घनघोर युद्धस्थल में घोड़ों को मल दल कर पानी पिलाने की हिम्मत रखता है, जो बिकट युद्ध प्रसंग के अवसर पर गीता का परमतत्व कहने की योग्यता और धैर्य रखता है। जिसके हृदय में भगिनी प्रेम की महा प्रतिष्ठा है—जो पाप और अनाचार के विध्वंस करने के लिये प्रभास और कुरुक्षेत्रों के मैदानों का सूत्रधार बन सकता है वह कभी इन्द्रियका गुलाम नहीं हो सकता।

भागवत में लिखा है कि स्त्रियाँ उनके प्रेम भक्ति में मतवाली हुईं उनके पीछे २ फिरतीं थीं। मैं पूछता हूँ कि कृष्ण भी किसी स्त्री के पीछे पागल हो कर फिरे? दुराचारी लोग स्त्रियों के पीछे फिरा करते हैं कि स्त्रियाँ दुराचारियों के पीछे फिरा करती हैं। फिर उन स्त्रियों के पति पिता क्यों निशंक कृष्ण के पास उन्हें जाने देते थे? बिना किसी महात्मा की पवित्रता पर विश्वास हुये—क्या कोई भी आदमी अपनी बहू बेटियों को किसी गैर आदमी के पास जाने दे सकता है? कोई कितना ही बड़ा महात्मा या बड़ा आदमी हो पर उसके साथ भी कोई अपनी स्त्रियों का दुराचार नहीं सह सकता। महात्मा गान्धी को भी स्त्रियाँ बहुधा घेरे रहती हैं। जिस परिवार में वे जाते हैं उसकी स्त्रियाँ उनसे कोई परदा नहीं करतीं। प्रायः अकेली

स्त्रियाँ उन के दर्शनार्थ जाती हैं। बहुत स्त्रियों ने गान्धी भक्ति के गीत बनाये हैं और वे गली २ उत्सवों पर गाया करती हैं। एक बार दो तीन सौ वेश्यायें उनके दर्शनार्थ आई थीं। और उन्होंने उनका उपदेश श्रवण कियाथा। इन सब का कोई पापात्मा वही अर्थ लगावे—जो दिव्य पुरुष कृष्ण के लिये लगाया गया तो क्या उसकी जबान काटी जा सकती है ?

शंकर, बुद्ध और दयानन्द वास्तव में कुछ अलौकिक विद्वान् न थे। यह सम्भव है कि उस काल में उनसे श्रेष्ठ विद्वान् संसार में हो। स्वयं शंकराचार्य के गुरु श्रीमत्पाद गोविन्दा चार्य की उतनो पूजा नहीं हुई जितनी उनकी। इसका मुख्य कारण सिर्फ़ इन महा पुरुषों का आचार ही था। आचार के ही बल पर उन्होंने वह सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त की। लोकमान्य तिलक बी० ए०, एल० एल० बी० थे और महात्मा गान्धी बैरिष्टर है। परन्तु इन देव तुल्य व्यक्तियों की पूजा इनकी विद्या के कारण नहीं हो रही है। इनका उत्कृष्ट चरित्र बल ही उनकी इस पूजा का कारण है। मनुष्य को चाहिये कि वह हर तरह अपने सदाचार की रक्षा करें। शास्त्रकार कहते हैं "आचार:प्रथमो धर्मः।" आचार सब से मुख्य धर्म है।

भगवान् मनुने आचार सम्बन्धी कुछ सुन्दर उपदेश दिये हैं। जो प्रत्येक मनुष्य को मनन करने योग्य हैं।

"मनुष्यों को सदा इस बात पर ध्यान रखना चाहिये कि जिसका सेवन राग द्वेष रहित विद्वान् लोग नित्य करें— और जिसका अन्तःकरण अनुमोदन करे-वही धर्म करणीय है। इस संसार में अतिकामात्मता अच्छी नहीं है और अति निष्काम होना भी ठीक नहीं है। सच्चा ज्ञान योग और कर्म योग यह सब कामना ही से सिद्ध होता है। काम संकल्प का मूल है और संकल्प से पुण्य कार्य होते हैं। यम-धर्म-व्रत सब संकल्प से ही होते हैं। निष्काम की कोई क्रिया नहीं है। वेद, स्मृति, सदाचार और अपनी अन्तःकरण की स्वीकृति यह चार प्रकार धर्म के हैं। जो अर्थ और काम में असक्त हैं उनके लिये धर्म ज्ञान कहा गया है। विद्वान् पुरुष को चाहिये कि विषयों में जाती हुई इन्द्रियों को दौड़ते हुए घोड़े के समान रोक कर संयम से रखे। इन्द्रियों के प्रसंग से अनेकों दोषों का प्रकटीकरण होता है - उन्हें दबा रखने ही से सिद्धि प्राप्त होती है। काम की तृप्ति भोगों में कदापि नहीं होती। घी डालने से तो अग्नि सदा बढ़ती ही है। इस लिये इन्द्रियों को वश में करके और मन का संयम करके सब अर्थों की उत्तम

प्राप्ति करे। सुन कर, छूकर, सूंघ कर जो मनुष्य न प्रसन्न हो, न ग्लानि करे—वही सच्चा जितेन्द्रिय है।

प्रसिद्ध परमहंस श्री रामकृष्ण महात्मा ने कभी द्रव्य और स्त्री का स्पर्श नहीं किया। कहा जाता है कि गाढ़ निद्रावस्था में भी यदि उनके शरीर से धातु और स्त्री का स्पर्श कराया जाता था तो उनका शरीर धनुषाकार अकड़ने लगता था।

अनेकों ग्रन्थों में आचार के इस प्रकार नियम लिखे गये हैं जो सब युवकों को पालन करने योग्य हैं।

१—वेद, गौ, ब्राह्मण, गुरुजन [माता-पिता-और शिक्षक आदि] वृद्ध, सिद्ध, आचार्य और अथितियों की सदैव पूजा और सत्कार करे।

२—द्विकाल सन्ध्या और अग्निहोत्र करे।

३—किसी के साथ बुराई न करे, बुराई करने वाले की भी सदा भलाई की ही चिन्ता करे।

४—सबको अपने ही समान समझे। किसी को कष्ट न दे, सबको प्रसन्न रखने का उद्योग करे; जिसमें आप प्रसन्न हो और दूसरे को दुःख पहुँचे ऐसा काम न करे, संसार में सब सुखी हों—सब निरोग हों, सब कल्याण का मार्ग देखें, ऐसी धारणा सदामनमें रक्खे।

५—सबका बन्धु क्रोधितों को शांति दाता, डरे हुओं को आश्वासन देने वाला, शरणागतों का रक्षक और साम्य प्रधान होना चाहिए। दूसरों से अपने लिए जिस बर्ताव की इच्छा रखता हो उनसे वही बर्ताव करे।

६—पराया धन-भूमि, स्त्री आदि पर मन न चलावे। व्यभिचार से सदा दूर रहे।

७—मल मूत्रादि वेगों को कभी न रोके। परन्तु काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि मानसिक वेगों को सदा रोकता रहे। इन्द्रिय रूपी घोड़ों की लगाम सदैव खिंची रखे, नहीं तो किसी अँधेरे खड्डे में ले गिरेंगे।

८—समय पर, हितकारी, थोड़ा, युक्ति युक्त, सत्य और मधुर भाषण करे।

९—दूसरे की निन्दा, चुगली, कठोर भाषण, निरर्थक बकवाद और बीच में बोलना [बात काटना] इससे सदा दूर रहे।

१०-किसी को अपना शत्रु या अपने को किसी का शत्रु न कहे। भिन्न २ स्वभाव के मनुष्यों से उनके अनुकूल हो आचरण करके उन्हें प्रसन्न करे।

११-शरीर रक्षा का सदा ध्यान रक्खे। कोई काम ऐसा

नहीं करना चाहिए जिससे तन्दुरुस्ती को धक्का पहुँचने का डर हो, एक बार भी शरीर रोगी हो जाने से उसे बहुत हानि पहुँच जाती है। बीमारी के लगातार धक्के तो शरीर को बिल्कुल बेकार कर देते हैं। इस-लिए सदैव निरोग रहने का प्रयत्न करना चाहिए।

१२–बेढ़ब साहस के काम नहीं करने चाहिए। जैसे अपनी शक्ति से अधिक बोझ उठाना, बड़ी नदी को भुजाओं से तैरना, अपने से अधिक बलवान् से लड़ना अगम्य स्थानों में घुसना आदि।

१३–बुहारी की धुल शरीर पर न पड़ने दे। धूप, धूआँ, धूल, पूर्व की हवा, कठोर वायु, और पाला, या बरफ गिरना इनसे बचाव रखे।

१४–निकलते हुए डूबते हुए और ग्रहण लगते सूर्य को न देखे। अन्य भी चमकदार वस्तुओं को न देखे।

१५–अपवित्र, घृणित, अप्रिय और दुर्गन्धित वस्तुओं की की ओर न देखे—न उन्हें छुये।

१६–राख, भूसा, बालू–अलसी आदि पदार्थ और गन्दे पदार्थों के ढेर पर न चढ़ें।

१७–बोझे को सिर पर उठाकर न ले जाय।

१८–रात्रि में वृक्ष के नीचे न सोवे।

१६-देवस्थान, चैत्य, श्मशान, बगीचा, सूना मकान, जंगल इन स्थानों में रात्रि वास न करे।

२०-पराये घर भोजन करने में सावधान रहना चाहिए।

२१-अग्नि में न तापे, विशेष कर पैरों के तलवे न सेके।

२२-नंगा न नहाए और बिना जाने जल में न घुसे।

२३-शराब, भंग, चरस, चुरूट, हुक्का, चाय, काफी, आदि न पीवे।

२४-पापी, दुराचारी, गर्भ गिरानेवाले, पतित, पागल और देशद्रोही का संग न करे।

२६-सदा मध्यम वृत्ति में चले। किसी काम में अति न करे।

२७-बहुत स्याने मालिक की नौकरी न करे।

२८-प्रत्येक कार्य का समय विभाग नियत करे। और सोते वक्त दिन भर की चर्या अवश्य नोट करले।

२६-जो चाहते हों कि हमारी सन्तान सदाचारी हों उन्हें चाहिए कि कभी दुराचार न करें।

३०-पहने हुए कपड़े पहनने से, एक विस्तर पर बैठने से या सोने से, लगाये हुए चन्दन में से चन्दन लगाने से, पहनी हुई माला पहनने से, साथ भोजन करने से, झूठा खाने और हाथ मिलाने से, संसर्गज रोग उड़ कर लग जाते हैं। इन विषयों में खूब सावधान रहना।

अध्याय आठवां

——०:❀:०——

यौवन का विकास

—:—

१२ वर्ष की आयु होने पर लड़का, और १० वर्ष की आयु होने पर लड़की, यौवन में प्रवेश करती हैं। इस आयु में उनके शरीर में परिवर्तन आरम्भ हो जाते हैं। कन्या की आयु में १६ वर्ष की आयु तक, और लड़के में २५ वर्ष की आयु तक ये परिवर्तन जारी रहते हैं। इसके बाद आयु परिपक्व हो जाती है।

यौवनकाल के परिवर्तन—इस आयु में लड़के-लड़की की बगल और पेड़ू पर बाल जमने लगते हैं। कंठ स्वर बदल जाता है। बालकों की लिंगेन्द्रिय बढ़ जाती है। और अण्डकोश में वीर्य उत्पन्न होने लगता है।

यद्यपि उनमें इन बातों का प्रादुर्भाव होता है। पर अभी पूर्णावस्था में बहुत देर होती है। कन्याओं के स्तन बढ़ने लगते हैं। और उन्हें रजोदर्शन भी होने लगता है।
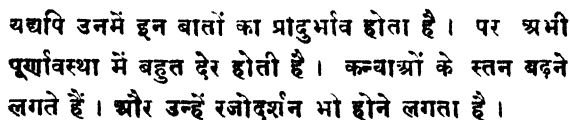
उनका मानसिक प्रभाव—इस अवस्था में प्रायः लड़के-लड़कियाँ तनिक भी संसर्ग दोष से काम सम्बन्धी चिन्तन करने लगते हैं। इस प्रकार की बातों में उन्हें चाव मालूम होता है। वे प्रगट या गुप्त ऐसी बातें सुनना या ऐसी पुस्तकें पढ़ना पसन्द करते हैं। यदि तनिक भी अवसर मिला, तो कुटेव सीख जाते हैं।

गुह्येन्द्रिय सम्बन्धी सावधानी—बच्चों को छोटी आयु से नंगा रखने या उनकी जनेन्द्रियों को साफ न रखने से उन स्थानों में मैल जमकर खुजली चलने लगती है। और प्रायः बच्चे उस स्थान को मसलने या खुजाने लगते हैं। धीरे २ उन्हें इन्द्रिय स्पर्श का चस्का लग जाता है। गोद में लेने पर भी वे कुटेव सीख जाते हैं।

दैनिक चर्या का खास प्रबन्ध—इस आयु में सावधानी से बालकों की दैनिकचर्या का प्रबन्ध करना चाहिये। उन्हें खूब शारीरिक और मानसिक परिश्रम में लगाये रखना चाहिये। जितना ही अधिक वे शारीरिक और मानसिक परिश्रम करेंगे, उतना ही उनकी शक्तियों में

विकास होगा। उन के विचार शुद्ध और चिंतन सात्विक बनाने को ऐसी सभा सोसाइटियों और ऐसी पुस्तकों का अध्ययन कराया जाए, जो इस विषय पर सरलता से प्रकाश डालती हों।
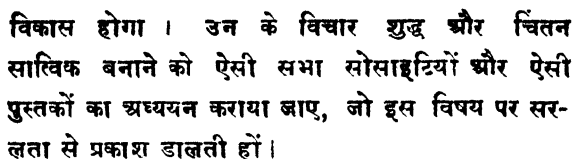
बालक के स्वभाव पर माता-पिता की वयस का स्वभाव—प्रो० रेल्ड फोल्ड ने अभी हाल में एक चित्ताकर्षक भेद ज़ाहिर किया है। जिसका यह भाव है कि जिन बालकों के माता-पिता बड़ी वयस के होते हैं। उनकी दिमाग़ी शक्तियां जवान माता पिता के बालकों से अधिक उन्नत होती हैं। संसार के महापुरुषों में से अधिक वही हैं— जो पक्की उमर के माता-पिता से उत्पन्न हुए हैं। आपने कुछ अंक भी एकत्रित किये हैं। जिनके अध्ययन से पता चलता है कि पचास साल से अधिक उमर के माता-पिता के बालकों में महापुरुषों की औसत संख्या सामान्य रूप से सबसे अधिक होती है। छोटी उमर की माता-पिता के लड़के प्रायः कठोर, दुष्ट और विषय वासनाओं के दास होते हैं। आजकल ६० प्रति सैकड़ा अभ्यस्त अपराधी नौजवान माता-पिता से उत्पन्न होते हैं। यह आवश्यक नहीं कि नौजवान माता-पिता के सभी बालक ऐसे ही हों। हाँ यह ज़रूर है कि वयस्क माता-पिता के बालकों की प्रवृत्ति

अपराध की ओर कम ही हुआ करतो है। नौजवान माता पिता से बालक जवानों का जोश, बेपरवाही, अनधिकार चेष्टा और वासनाओं की एक अच्छी संख्या विरसा में लेता है। और यही इसके स्वभाव बनाने में अधिक भाग लेते हैं। इसी कारण ऐसे बालकों का वीर, अपराधी, अथवा सफल सिपाही बनने की ओर अधिक झुकाव होता है। इसके विरूद्ध वयस्क माता-पिता से बालक को शांति, बुद्धिमत्ता, मितव्ययिता, और उत्तम स्वभाव का विरसा मिलता है।

इन्हीं प्रोफेसर साहिब ने अपने अंकों के आधार पर एक नक्शा तैयार किया है। जिससे पता चलता है कि भिन्न २ प्रकार के पुरुष कितनी २ वयस के माता-पिता के यहाँ उत्पन्न हुए। नेपोलियन, ग्रांट [अमेरिकन प्रधान] सिकन्दर आज़म, रुज़वैल्ट, और फ्रेड्रिक दी ग्रेट ३१ साल से कम वयस के माता पिताओं के यहाँ पैदा हुए। चित्र-कार, लेखक और सूक्ष्म विद्याओं के आचार्य प्रायः ३१ से ४० साल के माता पिता के बालक होते हैं। गेटे, स्पिलर, शेक्सपियर, रैफल, एवार्ड, मैकाले, गोल्डस्मिथ, इत्यादि इसी भाग में शामिल किये जा सकते हैं। ४१ से ५० वर्ष की वयस के बीच प्रायः देश के नेता पैदा होते हैं,

यथा — विस्मार्क, क्रामवेल, ग्लेडस्टोन, और कीटो, इसी वयस के माता-पिता के यहाँ पैदा हुए।
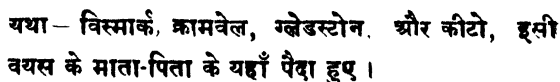
स्कूली शिक्षा—आप अपने प्राणों से प्यारे गुलाब के फूल के समान सुन्दर और कोमल बच्चों को प्रातःकाल उठते ही जल्दी से ठंडा, बासी खिला, और कपड़े पहनाकर स्कूल भेज देते हैं। पर आप यदि कभी उस स्कूल में जाकर देखें, तो आपको दीखेगा कि वहाँ के मनहूस-कमरे में सील भरी धरती पर लकड़ी की बेंच पड़ी हैं। और आपका बच्चा अपने साथियों के साथ, नीची गर्दन किए, मैली पुस्तक पर दृष्टि गाड़े अपने पतले दुबले पैर हिला रहा है। सामने साक्षात् यम-स्वरूप मास्टर साहिब मैले वस्त्र पहने, सपलपाता बेंत लिए गरज गरज कर उनके हृदयों को हिला रहे हैं। बच्चे बिचारे उन भाड़े के टट्टू मास्टर साहिब के बेंत के भय से बिलकुल अरुचि पूर्ण हृदय से सूखे चने के टिक्कड़ की तरह पाठ को गले से उतार रहे हैं।

अभागे बच्चे जब स्याही से कपड़े और बस्ते को मैला करके शाम को फीके और उदास मुख लिए घर आते हैं। और दोपहर की रक्खी हुई बासी रोटी खाते हैं। तब तो इनके प्रति करुणा की इति श्री हो जाती है। परन्तु जब वे अपने मस्तिष्क में अगले दिन के पाठ याद करने की

चिन्ताओं से उतने ही लदे देखे जाते हैं, जितना कि कोई क़र्ज़दार दरिद्र, जिसे उऋण होने की कोई आशा ही नहीं, तब उनकी भयङ्कर स्थिति पर विचार उत्पन्न होता है। पर ऐसा विचार लाखों-करोड़ों माता पिताओं में से किसी एक को भी नहीं होता। बहुधा तो ऐसा ही होता है कि बच्चे को ज्योंही ज़रा हंसते, खेलते या ऊधम मचाते देखा, कि बस या तो उसके स्वयं ही कान मल दिए जाते हैं, और या मास्टर के भयङ्कर नाम की उन्हें स्मृति दिलाई जाती है। हर हालत में मास्टर का नाम उनके लिए एक भेड़िये के नाम से कम नहीं।

क्या ऐसे निर्दय और विवेक हीन माता पिताओं से मैं पूछ सकता हूँ कि उनका यह प्यार कितने मूल्य का है?

आप जब किसी बकरी के या बन्दर अथवा गाय के छोटे बच्चों को मनोहर ढंग से उछल कूद करते देखते हैं। तब कितनी प्रसन्नता मन में अनुभव करते हैं। परन्तु बच्चे को सदा रोनी सूरत बनाए, किताबों में झुके बैठाए रखना ही आपको प्रिय मालूम होता है।

क्या वास्तव में पुस्तक और स्कूल ऐसे महत्व की चीजें हैं जिन पर भोले भाले बच्चों की प्रसन्नता, आनन्द और स्वास्थ्य निछावर किया जा सकता है। क्या आपको

इस तरह उदास, दुर्बल और चिन्ताग्रस्त बच्चों को देखकर करुणा नहीं होती है ?

अगर जवान होने पर आपका पुत्र बहुत पढ़ लिख गया, परन्तु तन्दुरुस्ती खो दी, तब क्या सम्भव है, कि वह अपने जीवन में सुखी हो सकेगा ? आज चारों तरफ़ लाखों युवक, जो इन गुलाम स्कूलों की टकसाल के बिल-कुल खोटे ऐसे सिक्के हैं जो बिना बट्टा दिये चल ही नहीं सकते, हमारे सामने हैं। हम इन्हें देखकर कहते हैं कि इन पढ़ पत्थरों को तैयार करके हमने कौम को, नस्ल को मिट्टी में मिला दिया।

क्या आप अब से हज़ारों वर्ष पूर्व के गुरुकुलों की पवित्र स्मृति को मन में धारण करेंगे ? जिनका उल्लेख हम अन्यत्र कर आये हैं। जहाँ राजकुमार और दरिद्र पुत्र एक आसन पर, एक ही गुरु के सम्मुख बैठकर, स्वच्छंद वायु में, वृक्ष के नीचे, परम गहन, आत्म-तत्त्व का मनन करते थे। जहाँ कृष्ण जैसे जगत्मान्य पुरु-षोत्तम से दरिद्र सुदामा ने मैत्री लाभ की थी। जहाँ जैमिनी और पाणिनी का निर्माण हुआ। जहाँ शुकदेवजी और अष्टावक्र जैसे महाज्ञानियों का निर्माण हुआ, जिन गुरुकुलों के स्तम्भ रूप व्यास, वशिष्ठ और कपिल जैसे

महा तपोनिष्ठ महाप्राण पुरुष थे। जिन्होंने जगत् से परे भी कुछ जान लिया था जो सदैव अगोचर द्रव्यों को देखते थे। जिनके लिए कुछ भी दुर्लभ न था।

वे भारत के बच्चे, जो इन गुरुकुल की छत्रछाया में बैठ कर अपना भविष्य निर्माण करते थे। आज १५), २०) रु० के वेतन भोगी, अपढ़, अनाड़ी, क्रूर और तन मन से मैले मास्टरों के बेंत के भय से अक्षराभ्यास करते हैं। हाय भारत की तक़दीर?

संसार भर के स्कूलों में जाकर देखिये, कि वहाँ बच्चों को कैसी सुन्दर रीति से, कैसे मनोरंजक ढंग से, कैसे प्रेम, आदर और सरलता से पढ़ाया जाता है कि सुनकर हैरानी होती है।

बच्चों का घर में जी नहीं लगता, वे दौड़कर स्कूल जाते, और बहुत खुश रहते हैं। अध्यापक को वे मन से प्यार करते हैं। वे बच्चे अपने खिलते हुए मस्तिष्क से शीघ्र ही संसार के सिर पर राज्य करते हैं।

मानव समाज का उत्कर्ष और विकास न केवल धन, बल और योग्यता की घुड़दौड़ में बाजी मारने का है। प्रत्युत् उसे मौलिकता और आत्म बलयुक्त बनाना भी आवश्यक है। और वह तभी हो सकता है कि उसका शरीर पूर्ण स्वस्थ और आत्मा पूर्ण शिक्षित हो।

अध्याय-नवाँ

---:o:---

व्यायाम।

व्यायाम करने से शरीर सुडौल और स्थिर होता है। अङ्ग थक जाने से फालतू कामचेष्टा नष्ट हो जाती है—नींद अच्छी आती है—मन स्थिर रहता है। भुक्त आहार का ठीक २ परिपाचन होता है। आलस्य दूर होता है बल और उत्साह की वृद्धि होती है। परिश्रम, थकान, प्यास, गर्मी सर्दी आदि सहने की शक्ति उत्पन्न होती है, इन्द्रियाँ वशीभूत हो जाती हैं, व्यायाम करने वालों को कभी कठिनाइयों में घबराना नहीं पड़ता। वृद्धावस्था उनके पास नहीं फटकती। जो पुरुष अवस्था, रूप और गुणों से हीन भी हैं उन्हें भी व्यायाम सुन्दर बना देता है। व्यायाम

करने वाले यदि कभी कच्चा पक्का - या उल्टा सीधा भी भोजन कर लेते हैं तो उसे भी पचा जाते हैं। उन्हें कभी अजीर्ण या दस्त की अथवा कब्जी की शिकायत नहीं रहती। गहरी नींद आती है स्वप्न पास नहीं फटकते। बग्घी मोटरों में खिचड़ने वाले, सदैव घृत मीठा आदि तरमाल उड़ाने वाले, अमीर मोटे और मेदस्वी हो कर बेडौल हो जाते हैं। दिमाग़ी मेहनत करनेवाले वकील, बैरिस्टर, जज, ग्रन्थ-निर्माता, अखबारों के सम्पादक आदि मन्दाग्नि-क्षय और निद्रा नाश में फंस कर दुनिया से जल्दी ही चल बसते है। व्यायाम से मन की चंचलता नष्ट हो कर और शरीर थक कर व्यभिचार की फालतू इच्छा नष्ट होती है—और व्यायाम के अभ्यासी मनुष्य के अङ्ग प्रत्यङ्ग इतने दृढ़ हो जाते हैं कि उसे एक बार के ही विषय भोग में इतनी तृप्ति हो जाती है कि फिर उसे बहुत समय तक उस प्रकार की अभिलाषा नहीं होती।

व्यायाम की एक मात्रा—आधा बल रख कर व्यायाम करना चाहिये। जब श्वास ज़ोर २ से आने लगे, शरीर थक जाय और मस्तक पर पसीना आजाय तब ही व्यायाम बन्द कर देना उचित है।

अधिक व्यायाम से हानि—अत्यधिक व्यायाम

करने से श्वास, कास, क्षय, प्यास, अरुचि, रक्त पित्त, भ्रम, ज्वरादि रोग पैदा हो जाते हैं और शरीर सूख जाता है। इसलिये बलार्द्ध से आगे व्यायाम कदापि नहीं करना।

व्यायाम निषेध—ऊपर कहे हुए रोगों में और भोजन करने के पीछे एवं रात्रि में व्यायाम नहीं करना चाहिये।

व्यायाम का प्रारम्भ—व्यायाम का प्रारम्भ-धीरे २ करना चाहिये। पहले दो चार हफ्ते वे थकेंगे। हर वक्त हाथ पैरों और पसलियों में दर्द रहेगा। परन्तु दो सप्ताह या एक सप्ताह बराबर अभ्यास करने से फिर थकावट न होगी। न पसलियाँ या हाथ पैर दूखेंगे। व्यायाम करने के पाँच सात मिनिट बाद ही शरीर ऐसा हो जाया करेगा, मानो कोई परिश्रम का काम ही नहीं किया है। फिर कोई बड़े परिश्रम का काम करने पर कभी भारी थकान भी न चढ़ेगी।

विख्यात प्रोफ़ेसर राममूर्त्ति ने व्यायाम सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण उपदेश लिखे हैं। जो इस प्रकार है -

१—व्यायाम का अभ्यास धीरे २ करना, एक दम बहुत अभ्यास नहीं करना चाहिये।

२—जो व्यायाम किया जाय-वह बहुत धीरे २ अङ्गों पर पूरा २ ज़ोर डाल कर करना चाहिये। जल्दी के और झटके के साथ व्यायाम करने से कोई लाभ नहीं होता।

३—व्यायाम को प्राणायाम के साथ मिलाकर करना चाहिये, इस प्रकार से श्वास को बाहर निकालो (श्वास नाक से ही छोड़ना और भरना चाहिये) और बाहर रोको, फिर धीरे २ खूब श्वास रोको। छाती-फेफड़े में श्वास भर कर तब व्यायाम करो। धीरे २ एक क्रिया करो और उसको एक ही श्वास में पूरी करने को कोशिश करो। यदि श्वास टूट जाय तो कोई हर्ज नहीं। फिर भर लेना चाहिये। और धीरे २ क्रिया करनी चाहिये। क्रिया समाप्त होने पर श्वास छोड़ देना चाहिये—और फिर भर लेना चाहिये। और फिर क्रिया करनी चाहिये। इस प्रकार व्यायाम करने से सीना चौड़ा होता है। फेफड़े-दिल, पसलियाँ मज़बूत होती हैं। दम बढ़ता है। जल्दी थकान नहीं आती। और बल बढ़ता है। यथार्थ में बल वायु में ही है। वायु को वश में करने से ही मनुष्य बलवान हो सकता है। प्राणायाम के साथ मिला कर व्यायाम करने से धीरे २ वायु वश में होने लगती है।

४ व्यायाम करते समय अपना मन सब ओर से हटा कर व्यायाम में ही लगाना चाहिये। और यह धारणा मन में रखनी चाहिये कि हम इस क्रिया से बराबर बलवान् हो रहे हैं। और भीमसेन वा हनुमान के समान बलवान् हो जावेंगे। इन पुरुषोंके चित्र भी सामने रखना उत्तम है।

५ – व्यायाम करने के पीछे धीरे २ टहल कर पाँच सात मिनिट सुस्ताना चाहिये। उस के पीछे ठंडाई पीनी चाहिये। ठंडाई बादाम १०, धनिया १ माशा, काली मिर्च ५ दाने; इलायची छोटी दो। ये सब शाम को थोड़े जल में भिगो कर रख देनी चाहिए। व्यायाम के पीछे ठण्डाई तैयार करनी चाहिये। बादाम के छिलके उतार कर और सब चीज़ों को एक साथ सिल पत्थर से बारीक पीस कर थोड़े से पानी में घोल कर छान लेना चाहिये। छानने का वस्त्र झिन-झिना होना चाहिये। फिर थोड़ी मिश्री मिला कर पी लेना चाहिये। इस ठण्डाई से कसरत के पीछे होने वाली खुश्की दूर हो कर तरावट आ जाती है। मौसम ठण्डा हो तो थोड़ी सोंठ मिला लेना चाहिये। और ज़रा गुनगुना करके पी जाना चाहिये। धीरे २ दो दो बादाम बढ़ाने चाहिये और एक सेर तक बढ़ा देने चाहिये। उसी हिसाब से अन्य चीज़ें भी बढ़ा लेनी चाहिये।

६—व्यायाम करने वालों को मांस नहीं खाना चाहिये। इससे सुस्ती, क्रूरता, तथा अनेक अवगुणों की वृद्धि होती है।

तेल मालिश—बहुधा पहलवानों को कहते सुना है कि "सौ लड़न्त और एक मलन्त" तेल मालिश करने से

शरीर की कान्ति पुष्टि होती और दृढ़ता बढ़ती है और बल वीर्य की अत्याधिक वृद्धि होती हैं। रोम कूप खुल जाते हैं। उनके रास्ते तैल भीतर घुस जाता है। सुश्रुत में लिखा है—

जलसिक्तस्यावबर्द्धन्ते यथा मूलेंकुरास्तरोः।
तथा धातुविवृद्धिस्तु स्नेहसिक्तस्य जायते।

"जैसे वृक्ष की जड़ में जल देने से डाली पत्ते और अंकुर बढ़ते हैं, इसी प्रकार तैल मर्दन करने से शरीर के धातु बढ़ते हैं।"

तैल मालिश सारे शरीर में अच्छी तरह करनी चाहिये। विशेष कर सिर में। हाथों में, छाती, पसली, रीढ़ की हड्डी और त्रिकस्थान में। पैरों में और पैर के तलुओं में खूब मालिश की जाय। शिर में तैल मालिश करने से दिमाग़ पुष्ट होता है। और पैरों में तैल मालिश करने से नेत्रों में ज्योति बढ़ती है। छाती और पसलियों में मालिश करने से सीना फेफड़ा और दिल मज़बूत होते हैं। पृष्ठ वंश और त्रिक में मालिश करने से बुढ़ापा जल्दी नहीं आता।

मालिश करने को तिल या सरसों का तेल ही अच्छा है। तिल का तेल सर्वोत्तम है। परन्तु शतावरी तैल मालिश करने से बहुत पुष्टि और कान्ति की वृद्धि होती है। शतावरी तैल का नुसखा यह है।

शतावार । खरेटी की जड़ । गंगेरन । शालपर्णी । पृष्टपर्णी । अरंड की जड़ । असगन्ध । गोखरू । बेल की जड़ कांस की जड़ । पियावांसा । ये ११ औषध ६।६ तोला । जौकुट करे । इन्हें दो सेर पानी में पकावे । जब तीन पाव पानी रहे, तब उतार कर छान ले । इस में १ सेर तिल का तेल । १ सेर गाय का दूध । १ सेर सतावर का रस । १ सेर पानी, सब मिला कर एक कढ़ाई में भरे-इसमें नीचे लिखी औषधी की लुगदी पानी से पीस कर मिलादे ।

सतावर । देवदारू । जटामासी । तगर । सफैद चन्दन । सोंफ । खरेटी की जड़ । कूट । इलायची छोटी । कमल । बाराही कन्द । मुलहटी । असगन्ध । प्रत्येक एक-एक तोला । इन सब को मन्दाग्नि से पकावे । जब तेल मात्र बच रहे—उतार कर छान ले । यही शतावरी तैल है । बहुत ही उत्तम है ।

———

अध्याय दसवाँ

—— :●: ——

बाल विवाह ।

—— :●: ——

बालविवाह की निकृष्ट और घृणित प्रथा ने जितना बड़ा आघात हिन्दूजाति को पहुँचाया है उतना किसी ने नहीं पहुँचाया। ब्रह्मचर्य की प्रशस्त रीति का मूलोच्छेदन करने वाला, सबसे प्रबल और तेज कुल्हाड़ा बाल विवाह है। मनुष्य जाति के कट्टर शत्रु, तन्दुरुस्ती के भयानक विष सदाचार के प्रबल विरोधी, बालविवाह ने जब से संसार की मुकुट हिन्दू जाति में अपना प्रवेश किया है, तभी से उसे चौपट कर दिया है, मुकुट की मणि मुकुट से गिरकर पैरों से कुचली जाने लगी, और सब से बड़े शोक की बात तो यह है कि इस प्लेग और हैज़े से भी भयानक रोग को अभागे

हिन्दू सदा आनन्द से स्वागत करते रहे हैं। इसके भयंकर परिणामों को लिखते सचमुच लेखनी थर्राती है। रोमाञ्च हो आते हैं, हमारी सारी इज्जत, तमाम आबरू, सारा बड़प्पन और हमारे सिर की पगड़ी तक इस डायन प्रथा ने धूल में मिला दी है, कहाँ तक हम रोवें, इसके परिणाम को देख कर सारे शरीर में हज़ारों बिच्छू काटने जैसा दर्द होता है। १५ वर्ष के बच्चे और ११ ग्यारह वर्ष की बालिकायें जिस देश में मा बाप बनकर इस महान् पद को कलंकित करें, उस देश का क्यों न सत्यानाश जाय? पकने से पहले ही जिसके खेत को कुचल कर वर्बाद कर दिया गया हो, उस कम्बख्त किसान की बदनसीबी का भीकुछ ठिकाना है? जिस के फूल खिलने से प्रथम ही मसल कर मोरियों में फैंक दिये गये हैं। उसके दुर्भाग्य पर शत्रु को भी दया आवेगी।

आपने क्या देखा नहीं है, छोटे २ बच्चे दूल्हा दूल्हिन बनकर विवाह करने चले हैं। बच्चा अभी धोती पहनना नहीं सीखा, लड़की रोकर रोटी माँगती है और वे इसी नादानी की अवस्था में गृहस्थ की ज़बरदस्त गाड़ी में अपने ज़ालिम मा बापों द्वारा जोत दिये जाते हैं। बड़े अभागे ही बच्चों को ऐसे ज़ालिम मा बाप मिलते हैं, जिनकी वह खुशी

उस कसाई की खुशी से किसी प्रकार कम नहीं है, जो अपने सामने तड़पते जानवर को देखकर होती है ।

विवाह की बात दूर रहे, उनके संस्कार में भी यही विषैली स्प्रिट भरी जाती है, क्यों बेटा कैसी बहू लावेगा । गोरी या काली । बेटा यों ही तोतली बाणी से कह देता है 'ताती, मा बाप ही—ही करके हँस देते हैं', बच्चा भी ताली बजा कर हँस २ कर बारम्बार ताती २ कह कर पुकारता है । बच्चा हँसी को समझता है हँसी की वजह को नहीं। जिस बात को सुनकर सभी हँसते हैं—उसी बात को बार २ कहना उसे अच्छा लगता है । जन्म से ही प्रभाव कुसंस्कार का रहता है, विवाह होते ही रगड़ने मात्र की देर है—रगड़ा लगा, फक से सारी शक्ति भस्म हो गई । जीवन की आशाएँ धूल में मिल गई । न तो उसे संसार का तजुर्बा है और न उसके प्रबल प्रवाह में ठहरने की शक्ति ही है—और नहीं उसे भविष्य का ज्ञान ही है । हो कहाँ से ? उसे ऐसा होने का अवसर ही नहीं दिया गया ? वह अनाथ ग़रीब संसार की तपती भट्टी में भस्म होने को झोंक दिया जाता है । शोक !!

इसके भयंकर परिणाम को कौन नहीं जानता ? सारा भारत इस आग में तप रहा है । तमाम समुदाय में

यह आग भड़क रही है—दिन रात नौन तेल की चिन्ता में यह अमूल्य जीवन जर्जर हो रहा है। हमारा जीवन जो विषमय हो रहा है, सदा मौत की भीख जो हम माँगते हैं—इसका कारण क्या है ? यह दुःख कहाँ से हमारे ऊपर आया हैं-इस सबका उत्तर है बाल विवाह ।

लड़के लड़कियों के बाल विवाह, विषय भोग की अधिकता, और व्यभिचार की प्रवृति से मनुष्य में वीर्य की कमी और निर्बलता आगई है। जिससे एक तो गर्भ स्थिति ही कम होती है। दूसरे गर्भ रह भी जाय तो क्षीण हो जाते हैं, अथवा सन्तान होकर तुरन्त मर जाती है। जो भाग्य से बच भी रहे तो यह दशा है कि अत्यन्त निर्बल, निस्तेज़, स्वर फटे बाँस के जैसा। सूरत बन्दर की, प्रमेह की बहुतायत, स्मरण शक्ति का नाश, कम अकल, आँखों के अन्धे, चश्मों के ख़रीदार, सदा के रोगी, वैद्य डाक्टरों के यार, चुपड़ी रोटी खावें तो खट्टी डकार, पाव भर दूध पीवें तो दस्तों की भरमार, किसी को बादी का विकार, मुटापे का भार, थोंद के भार से चलना दुश्वार, पेट लटकना, घुटने पकड़ कर उठना, बोलने में हाँपना, धमकी से काँपना, किसी का पेट पटक रहा है-कमर कमान हो रही है--गालों में गढ़े, आँख भीतर बैठी, कोस भर मार्ग चलना महाभारत

की लड़ाई, नीचे से कोठे पर चढ़ना पहाड़ की चढ़ाई है। यह जवानी की दशा है? यह हमारी खिलती फुलवारी का नमूना है। बुढ़ापे की दशा को आप समझ ही लें-बुढ़ापे का स्यापा अब जवानी में ही भुगत जाता है—अब ३५ वर्ष का पुरुष बूढ़ा कहाता है। आप ही कहिये, ऐसे स्त्री पुरुषों के वंश कैसे चलेंगे? और चलेंगे तो कै दिन जीवेंगे? मित्रों! इसी से पीढ़ी दर पीढ़ी सन्तान कम होती जा रही है।

बचपन ही से काम कला को भड़का कर जिनकी मनोवृत्तियाँ गन्दी कर दी गई हैं—वे अपने बच्चों के रुधिर में इस विषैले प्रभाव को उतार देते हैं। जिससे उनकी सन्तान बचपन ही से विषयी, लम्पट, और अधर्मी हो जाती है। उनकी जड़ में उत्पन्न होते ही कीड़ा लग जाता है—और जब वे फलते, फूलते, अपनी सुगन्ध को संसार में फैलाते, अपने प्रताप से भूमण्डल को कँपाते, उससे प्रथम ही मुर्झा कर संसार से उठ जाते हैं। उनकी हार्दिक, स्नायविक, मानसिक दुर्बलता उन्हें अधम और नीच ही बनाये रखती है।

हमारे पुत्र के शरीर में उत्साह नहीं है, बल नहीं है, साहस, वीरता नहीं है। और दुनियाँ के किसी भी फलको

भोगने में क्षमता नहीं है। ये सब संकट बाल विवाह द्वारा ब्रह्मचर्य का नाश करके ही क्या हमने मोल नहीं ख़रीदे हैं।

हमारी नस्ल बर्बाद हो गई, ज़िन्दगी घट गई, तन्दुरुस्ती मिट्टी में मिल गई। रह गई हड्डी की ठठरी, रह गई अधमरी देह, इसका क्या कारण है? वही तुम्हारे ज़ालिम माँ बापों का प्यार। और वही बहू देखने की लालसा!!!

पन्द्रह सोलह वर्ष की उम्र हुई है बच्चा स्कूल में ऊँचे दर्जे में पहुँचा है, दिमाग़ी मिहनत का ज़ोर है—उधर गौना हो कर भी आ गया। बच्चे की जान पर बलैया लेने वाली उसकी मा आँचल पसार कर, दाँत निकाल कर गिड़ गिड़ा कर, कहती है। हे विश्वनाथ बाबा! हे काली भवानी? हे चौराहे की चामुण्डा अब तो पोते का मुँह दिखा दे? यही नहीं, उसकी तैयारी भी होने लगीं। दोनों जोड़ी एक कोठरी के अन्दर बन्द करदी गई-इधर दिमागी मिहनत, पढ़ने का ज़ोर, उधर खाने की तंगी, घी दूध का नाम नहीं—उधर पोते होने की लालसा। इन सब में बच्चा पिस मरा। हाड़ की ठठरी रह गई। मा कहती है अजी देखो, बच्चे को क्या हो गया है? पीला पड़ता जाता

है। किसी सैय्यद वैय्यद का छाया तो नहीं पड़ गया है ? किसी शाह साहेब को ही दिखलाओ ?
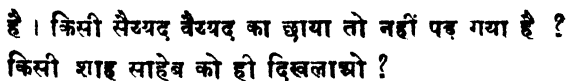
बाप देवता बोल उठे, पढ़ने में बड़ी मिहनत है। अब हम स्कूल न भेजेंगे। बहुत पढ़ गया है, इतना तो हमारे घर में कोई पढ़ा भी नहीं था? बस हो गया-तालीम का द्वार बन्द हो गया और सत्यानाश का द्वार सोलह आना खुल गया, रोग भी बढ़ता ही गया। अन्त में शीघ्र ही राम २ बुल गई। जब कली खिलने के दिन आये थे अब उसकी सुगन्ध फैलनी थी—उससे प्रथम ही वह कुचल डाला-मसल डाला गया। सो भी प्यार करने वालों के हाथों से, उस पर न्योछावर होने वालों के हाथों से। तब वही माँ बाप छाती पीट कर रोते हैं। हाय बेटा। अन्धों की लाठी छिन गई—तब उनका रोना आकाश फाड़ता है। वे अभागे नहीं समझते कि उन्हीं के नापाक हाथ उनके मासूम और बेगुनाह बच्चों के खून से रंगे गये हैं, उन्हों ने अपने पैर में कुल्हाड़ी मारी है—कोई शक्ति है ? जो उन के दामन से उस खून के दाग़ को छुड़ा सके।

भाइयों तुम्हें अपनी दया का बड़ा अभिमान है, पर सच तो यह है कि तुम्हारी बराबर संसार में कोई क़साई और क्रूर नहीं है। छोटे २ भुनगे, चींटी, कीड़े, मकोड़ों,

कव्वे, कुत्तों आदि पशुओं के लिए तुम्हारे पास दया का भण्डार भर रहा है। पर अपनी सन्तानों पर यह जुल्म कि उनकी सारी आशाओं को कुचल कर, उनकी उठती जवानी पर कुछ भी तरस न खाकर, उन्हें हाय ऐसी बुरी मौत मार रहे हो कि क़साई गाय को भी न मारेगा। क़साई एक ही हाथ में साफ़ कर देता है, वह बेचारी दुख से छूट जाती है। पर तुम तो एक वर्ष की दूध पीती कन्याओं को विधवा बनाकर पापों की नदी बहा रहे हो। उन्हें रोम २ में विष पैदा करने वाले दुःख सागर में धकेल कर जीते जी दुःखाग्नि में भून रहे हो। उनके तड़पने को देखकर जो पुण्य की उत्पत्ति समझ रहे हो-इतना होने पर भी तुम्हारा पत्थर का कलेजा नहीं पिघलता। तुम्हारी छाती पर साँप नहीं लोट जाता? ये जो ३ करोड़ विधवाएँ तुम्हारी छाती पर मूँग दल रही हैं-कोई चुपचाप सर्द आह भर कर भारत को रसातल पहुंचा रही है। कोई धींवर, क़साई के साथ मुँह काला करके हिन्दू वंश की नाक कटा रही हैं, फिर भी जो तुम ऋषि सन्तान कहलाने की इच्छा रखते हो, अब भी जो तुम्हें अपने रक्त और वंश का अभिमान है तो शर्म है और लाख २ शर्म है।

ऐसा कौन सा कठोर हृदय मनुष्य होगा जो ३ करोड़

विधवाओं को देख कर दहल न उठे। यह देश पर आई हुई आपदाओं का पूर्व रूप है। जर्मनी में ६८ लाख विवाहिता स्त्रियाँ हैं, इंग्लैंड में १।। करोड़। परन्तु भारतमें ३ करोड़ विधवाएँ? जिनमें बहुत सी दूध पीती बच्चियाँ भी हैं।

प्राचीन काल के विवाह के नियम अति उच्च थे।

विवाह का जैसा गम्भीर महत्व पूर्ण वर्णन वैदिक पद्धति में है वैसा संसार की किसी मज़हब या जाति में नहीं है। वेदों में पुरुष को "आजन्तोऽग्नयः" अर्थात अग्नि के समान प्रकाशित, ऊपर जाने वाला, उन्नतिशील, उष्ण और तेजवान् बताया है और स्त्री को "विरश्मयः" प्रकाश को ले जाने वाली कहा है। देखिये —

यो वः शिवतमोरस्र स्तस्य भाजयतेह नः उशतीरिवमातरः।

।।यजुर्वेद ११-५२।।

इसका अभिप्राय यह है कि दोनों स्त्री पुरुष एक दूसरे के सहायक होकर एक दूसरे के स्वभाव और आचरणों का अनुकरण करें और परस्पर सद्गुणों को धारण करें और मैत्री भाव से आयु पर्यन्त रहें।

सिनी वालि प्रथुष्ठ के या देवामसि स्वस्य जुहस्व हव्य
माहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढिनः। ।।यजु० ३४-१०।।

हे देवि ! तुम ब्रह्मचारिणी और विदुषी बन कर उत्तम विद्वान् पति को चुनो और आनन्द पूर्वक गृहस्थाश्रम में प्रवेश करके उत्तम प्रजा उत्पन्न करो।

इसी प्रकार वेदों में विवाह के सम्बन्ध में अनेक आदेश मिलते हैं कि विवाह का आदर्श दो समान आत्माओं का संगठित करना है, जिससे समाज सेवा में सुविधा हो।

यह विवाह युवा अवस्था में ही होना चाहिए। जैसे -

तमस्मेरा युवतयो युवानं मर्मृज्यमानाः परियन्त्यापः।
स शुक्रेभिः शिक्वभी रेवदस्मे दीदायानिध्मो घृतनिर्णिगप्सु।

॥ ऋ० म० २ । सू० ३५ । म० ४।

अर्थात् ब्रह्मचारिणी और विदुषी स्त्रियाँ २० वा २४ वें वर्ष वाली-जैसे जल वा नदी समुद्र में प्राप्त होती है-वैसे हमको प्राप्त होने वाली युवा पति को प्राप्त होती हैं--वह ब्रह्मचारी शुद्ध गुण और वीर्यवान् हमारे मध्य में शुभ कर्म और तुल्य स्त्री को प्राप्त होवे जैसे आकाश में जल को शोधने हारा विद्युत अग्नि है।

वधू रियं पति मिच्छन्त्येति य ईं वहाते महिषी मिषिराम्।
आस्य श्रवस्याद्रथः आ च घोषत्पुरू सहस्रा परिवर्तयाते ॥

॥ऋ० म० ५। सू० ३७। म० ३।

अर्थात् हे मनुष्यों ! जो गुणवती परीक्षित वर की इच्छा करने हारी प्रिया स्त्री को प्राप्त होता है—और जो वधू स्वामी की इच्छावाली स्व सदृश प्रिय पति को प्राप्त होती है। वे पुरुष स्त्री इस गृहाश्रम में अत्यन्त विद्या धन धान्य युक्त हों। और वे दोनों रथ के समान प्रिय वचन बोलें, और वे हज़ारों शुभ कार्यों को सिद्ध करते हैं। पाठक देखें-कैसा उच्च आशय है। विवाह काल की प्रतिज्ञाओं पर भी ध्यान देने से ऐसा ही महान् आशय उदित होता है।
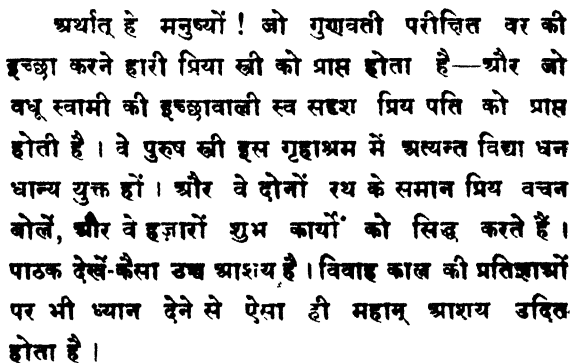
ओं गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः।
भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वा दुर्गार्हपत्याय देवाः॥

हे वरानने ! जैसे मैं ऐश्वर्य सुसन्तानादि सौभाग्य वृद्धि की बढ़ती के लिए तेरे हाथ को ग्रहण करता हूँ—तू मुझ पति के साथ बुढ़ापे तक सुख से रह। तथा हे वीर ! मैं सौभाग्य की वृद्धि के लिए आपका हस्त ग्रहण करती हूँ। आप मेरे साथ वृद्धावस्था तक प्रसन्न तथा अनुकूल रहिये। आप और हम दोनों परस्पर पति-पत्नि भाव से प्राप्त हुए, सकल ऐश्वर्य युक्त, न्यायकारी, सब जगत की उत्पत्ति कर्ता, नाना जगत रचिता परमात्मा और ये सब सज्जन

विद्वान् गण गृहाश्रम के लिये आपको मुझे देते हैं। आज से आप मेरे और मैं आपके हाथ बिक चुके।

ओं अहं विष्यामि मयि रूपमस्या वेदद्विपश्यमनस्य कुलायम्।
न स्तेयमद्मि मनसोदमुच्चेस्वयं श्रन्थानो वरुणस्य पाशान्॥

जैसे मन से कुल की वृद्धि को देखता हुआ मैं तेरे रूप को प्रेम से प्राप्त और व्याप्त होता हूँ। वैसे तू भी मुझ में होकर अनुकूल व्यवहार कर। जैसे मैं मन से भी इस तुझ बधू के साथ चोरी को छोड़ता हूँ, और किसी उत्तम पदार्थ का चोरी से भोग न करूँगा। स्वयं थककर भी व्यवहार में विघ्न स्वरूप दुर्व्यसन के बन्धनों को दूर करूँगा वैसे तू भी किया कर।

ओं समजन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सममातरिश्वा संधाता समुदेष्ट्री दधातु नौ॥

अर्थात्—हम दोनों, इन विद्वानों के सामने प्रतिज्ञा करते हैं कि हमारे हृदय दो प्रकार के जलों के समान मिल जायेंगे। जीवन के लिये जैसे प्राण वायु है, सृष्टि के लिये जैसे सृष्टिकर्ता हैं उपदेश के लिये जैसे श्रोता हैं, वैसे ही हम पति पत्नी एक दूसरे के प्रिय होंगे।

इन सभी प्रमाणों से विवाह की उत्कृष्टता प्रतीत होती है।

इस सुन्दर परिपाटी को लोप करने के लियेस्मृति आदि अनेक ग्रन्थों की सृष्टि की गई। इन सभी ने समाज को गिराने की भरपूर चेष्टा की।

सबसे प्रथम बौधायन ने विवाह की मर्यादा को शिथिल किया। मनु ने लिखा है कि रजस्वला होने के ३ वर्ष बाद तक कन्या माता पिता की प्रतीक्षा करे। पीछे वह स्वयं विवाह करने में स्वतन्त्र है। पर इतनी शर्त बढ़ा दी कि कन्या 'नग्निका' तथा ब्रह्मचारिणी हो। बौधायन ने 'नग्निका' का अर्थ सहवास योग्य १६ वर्ष की, किया है। सत्यव्रत और शैनिक ने भी यही अर्थ किया।

सातवीं सदी में अमरकोष में नग्निका का अर्थ—"अनागतार्तवा" किया गया। अर्थात् जिसका रजो-दर्शन न हुआ हो। यानी १२ वर्ष की कन्या को अधिकारी विवाह का बनाया।

गोस्वामी रघुनन्दन जी ने इसका अर्थ १२ से भी कम सिद्ध किया।

दूसरे स्मृतिकारों ने लिखा—"कन्या के स्तन उन्नत होने से प्रथम ही विवाह करना—या रजस्वला होने से प्रथम ही रजस्वला होने पर विवाह किया जावे तो विवाह दान देने वाला और लेने वाला दोनों नर्क में पड़ते हैं।

दोनों कुल के गुरुजन विष्ठा के कीड़े बनते हैं। अतएव बाल्यावस्था ही में विवाह करना चाहिये।

अङ्गिरस स्मृति में लिखा है कि "यदि पिता अपनी कन्या को १२ वर्ष हो जाने पर विवाह नहीं करता तो वह अपनी कन्या के रज को पीता है। यही बात स्पष्ट यम-स्मृति में लिखी है।

राजमार्तण्ड में लिखा है कि 'पिता माता और बड़ा भाई यदि कन्या को रजस्वला होते देख ले तो नर्क को जाता है। वह कन्या दूषित हो जाती है। यदि कोई ब्राह्मण उसके साथ विवाह करे तो वह पतित हो जाता है। द्विजों को उसे अपनी पंक्ति से निकाल देना चाहिये। शीघ्रबोध में लिखा है –

अष्टवर्षा भवेद्‌गौरी नववर्षाच रोहिणी।
दशवर्षा भवेत्कन्या अतऊर्ध्वं रजस्वला॥

आठ वर्ष की कन्या गौरी, नौ वर्ष की रोहिणी और दश वर्ष की कन्या होती है। इससे बाद रजस्वला संज्ञा होती है। उसे देखकर ही माता पिता भाई को नर्क हो जाताहै। गोस्वामी रघुनन्दन जी ने भी १० वर्ष की कन्या का विवाह करने की बात लिखी है।

बृहस्पति संहिता में ३० वर्ष के पुरुष की कन्या से विवाह करने का आदेश है।

दक्षस्मृति में लिखा है—

उद्विहेदष्टवर्षमेव धर्मो न हीयते।

अर्थात् आठ वर्ष की कन्या का विवाह करने से धर्म नहीं जाता।

अन्त में गिरते २ बंगाल के गोस्वामी रघुनन्दन जी अपनी स्मृति में लिखते हैं कि विवाह का उत्तम समय ७ वर्ष है वह गर्भ की तिथि से गिनना चाहिए। इस प्रकार ६ वर्ष और ३ मास ही विवाह का काल निश्चय हुआ।

वही महा पुरुष रघुनन्दन जी फिर लिखते हैं—

अयुग्मे दुर्भगा नारी युग्मेतु विधवा भवेत्।

यदि २ पर विभाग न होने वाले संख्या के वर्षों में विवाह होगा, तो वह मन्द भाग्या होगी और इसके विपरीत वर्षों में विधवा होगी। तब न युग्म न अयुग्म में विवाह करे। कुछ मास की कन्या का ही विवाह करदे।

इस प्रकार से इन मनुष्य के कल्याण के परम शत्रुओं ने स्वच्छन्दता से घटते २ कुछ मास की कन्या का विवाह ही धर्म सम्मत बताया। सच पूछो तो ये ही स्मृतिकार भारत की अधोगति के उत्तर दाता हैं। कहाँ तो वैदिक

समय का २४, ३२, ४८ वर्ष का विवाह काल ! और कहाँ १२, १०, ८, ६ और कुछ मास ही की आयु रह गई ? हाय ! हमारी मातृ शक्ति को इन बुद्धि भृष्ट स्मृति कारों ने यों पैरों से कुचल डाला।

अब यह बात विचारने की है कि इस बाल विवाह का बुरा रिवाज़ क्यों देश में फैला। प्रकृति का नियम है कि बिना जरूरत कोई वस्तु पैदा नहीं होती। आज कल के नये शोध के विद्वानों की राय है कि भारत गर्म देश है और वहाँ कन्याएँ बहुत जल्द रजस्वला हो जाती हैं। यहाँ तक कि बङ्गाल में १२ वर्ष की माताएँ सबूत में पेश की जाती हैं। भारत और संयुक्त प्रान्त में १० वर्ष की लड़कियों को गर्भ रह गया है और कइयों ने ठीक ही समय पर बच्चा उत्पन्न किये और दोनों नीरोग तथा जीते जागते रहे हैं।

डाक्टर चक्रवर्ती का कथन है कि वे बाल्यावस्था से एक ऐसी कन्या को जानते हैं, जिसने दस वर्ष की अवस्था में बच्चा जना।

---

†-Medical Juirsprudence for india by R. Chevers. Page 673.

डाक्टर वेली—कलकत्ते के एक रईस की ११ वर्ष ५ मास की लड़की को लड़का पैदा हुआ।

डाक्टर ग्रीन—ढाका में मैंने १ लड़की को १२ वर्ष की आयु में गर्भवती पाया। बच्चा होती वार लड़की मर गई।

डाक्टर कन्हैयालाल दे—बङ्गाल में आम तौर पर १२ वर्ष की लड़कियाँ गर्भवती पाई जाती हैं।

इन प्रमाणों से पता लगता है कि देश में बालमाताओं की कमी नहीं है। अब यह देखना है कि अन्य देशों में क्या हाल है। भारत ऊष्ण देश होने से जल्द कुमारियाँ ऋतुमती होती हैं यह प्रकृति का सर्वत्र ही एक नियम है।

आयुर्वेद का वाक्य है—

'द्वादशात् वत्सरादूर्ध्वमापञ्चाशत समास्त्रियः।
मासि २ भगद्वारा प्रकृत्यैवार्तवं सृजेत् ॥'

अर्थात् १२ वर्ष से ५० वर्ष की आयु तक महीने २ रजस्राव होता है। यह १२ से ५० तक की अवधि ऋषियों ने जो बताई है सो किसी देश के लिए नहीं, सब देशों के लिए समान भाव से है, चाहे वह गर्म हो, चाहे सर्द। समस्त पृथ्वी की कन्याएँ इसी अवस्था में रजस्वला होती हैं। इसी की पुष्टि में प्रसिद्ध डाक्टर हाल्टिक लिखते हैं—

"So for as is known, there is no difference as to the time of the first menstruation among the different races of human beings, it is no earlier under the same circumstances in the Negroes than in the white female.

Dr. F. Holtick.

अर्थात् जाँच करने पर ज्ञात हुआ है कि संसार की सब जातियों की कन्याएँ लगभग एक ही अवस्था में रजस्वला होती हैं। यदि अफ्रीका के हबशी की लड़की और यूरोप से ठण्डे देश की गोरी लड़की एक ही तरह पाली जाँय तो दोनों एक ही साथ ऋतुमती होंगी।

× मिस्टर राबर्टसन ने खूब जाँच कर निश्चय किया है कि भूमण्डल के सब देशों में लड़कियाँ एक ही आयु में रजस्वला होती हैं।

इंग्लैंड के मैनचेस्टर लाइंगइनो अस्पताल [Manchister lying in Hospital England] में ३४० लड़कियों की परीक्षा ली गई, और वे निम्नलिखित आयु में रजस्वला हुईं —

× The Origin of Life Page 303.

तादाद कन्या	कितनी आयु में रजस्वला हुईं
१० कन्या	११ वर्ष की आयु में
१६ ,,	१२ ,, ,,
५३ ,,	१३ ,, ,,
८५ ,,	१४ ,, ,,
२७ ,,	१५ ,, ,,
७६ ,,	१६ ,, ,,

†भारत में २७ गोरी लड़कियाँ इस अवस्था में रजस्वला हुईं ।

४ लड़कियाँ १२–१३ वर्ष के बीच में ।

८	,,	१३–१४	,,	,,
६	,,	१४–१५	,,	,,
५	,,	१५–१६	,,	,,
१	,,	१६–१७	,,	,,

×फ्राँस के राजा फ़िलिप ने इंग्लैंड की राजकुमारी को १२ वर्ष की आयु में वरा । आपकी दूसरी कुमारी का विवाह ६ वर्ष की आयु में हुआ ।

†Dr. Fayrer Calcutta European Femel Orphan asylum.

×Medical Jurisprudence by R.Chevers.

इंग्लैण्ड के राजा रिचर्ड दूसरे का विवाह फ्रांस की कुमारी "इसावेल" से हुआ तो उस समय राजकुमारी की आयु कुल ८ वर्ष की थी।

एलिज़बेथ हार्डविक [Countess of Shrewsbury] का विवाह १३ वर्ष की आयु में हुआ।

इंग्लैंड के राजा हेनरी सप्तम के अत्यन्त निर्बल होने का यही कारण था कि उनकी माता का विवाह कुल नौ वर्ष की अवस्था में हुआ था। और जब हेनरी का जन्म हुआ तो उनकी माता [Lady Margaret] की आयु कुल दस वर्ष की थी। साउथेम्पटन के अर्ल की लड़की "आडरे" का विवाह हो चुका था, जब १४ वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हुई। एक विद्वान् लिखते हैं—

"The whole Pereage might be gone through with similar results......the disgracefully early unions."

अर्थात् इङ्गलैंड के कुल उच्च कुल के लोगों की यही दशा थी कि वे अत्यन्त छोटी अवस्था में विवाह करते थे। और उस देश में भी भारत के समान छोटी अवस्था में गर्भ धारण होता था। मुसलमानों के नबी ने आयेशा से ७ वर्ष की अवस्था में विवाह किया। और जब वह आठ

वर्ष की हुई तो विषय किया। मुसलमानी क़ानून में ७ से ऊँची अवस्था की लड़की से विषय जायज़ है। किसी नौ या दस वर्ष की कन्या में विवाह के चिन्ह प्रकट होजाँय तो वह बालिग़ समझी जाती है।

इन अनेक देश और जाति के उदाहरणों से यही सिद्ध हुआ कि भारत में लड़कियाँ छोटी अवस्था में रजस्वला होती हैं तो इसका यह अर्थ नहीं है, कि देश की जलवायु गर्म है, वरन् भूमण्डल के प्रत्येक देश वा जातियों के लिए इस बारे में एक ही नियम है। वास्तव में बाल विवाह के कारण और ही हैं और वे ये हैं—

१—देश में अज्ञान और स्वार्थ का फैलना।

२—स्त्रियों के अधिकारों को छीन लेना।

३—गुड़ियों से खेलना, उनकी शादी करना, गुड्डे-गुड्डों को एक साथ सुलाना और उनके बच्चे होने के खेल खेलना।

४—बच्चों के मुख पर उनके विवाह की बातें करना, जिससे उनको यह ध्यान पैदा हो जाय कि वे अब सयाने हो गये हैं। उन्हें वहू या दूल्हा मिलेगा।

५—बार २ दूल्हा, सास की बात कहना, गालियाँ भी वैसी ही भद्दी देना, जिसमें दूल्हा आदि का जिक्र हो।

६—ब्याह शादियों और उत्सवों में मन को बिगाड़ने वाले बुरे २ गीत गाना—फ़ौश दिल्लगी और हाव भाव करना।

७—बालकों के सामने सखी सहेलियों से बेहूदी विषय सम्बन्धी कहानी सुनाना सुनना।

८—बच्चों का विवाह करके उनका आपस में मेल जोल होने देना, या साथ सोने देना आदि कारणों से लड़कियाँ जल्द सयानी हो जाती हैं और जल्दी ही रजस्वला हो जाती हैं। इसीलिए उन्हें बालविवाह करके और बर्बाद करना कदापि उचित नहीं हैं। अल्पायु का गर्भ धारण माता, पिता और पेट की सन्तान तीनों के लिये अत्यन्त हानिकारक होता है। बहुधा ऐसी अवस्था में गर्भपात हो जाता है। गर्भधारिणी को जन्म अवसर पर बहुधा अत्यन्त कष्ट होता है। और बहुधा मृत्यु हो जाती है। यदि बच भी रही तो बच्चा उसका कोमल अङ्ग चूस २ कर उसे निर्बल कर देता है, दूसरी तीसरी बार वे ऐसी निर्बल हो जाती हैं कि कभी जीवन पर्यन्त आरोग्य नहीं रहतीं। किसी न किसी असाध्य क्षय, प्रसूति, गठिया, प्रदर, रक्त गुल्म, शूल आदि रोगों में फँस जाती हैं।

डाक्टर डी० सी० सोम ने मेडीकल कान्ग्रेस कलकत्ते

में वर्णन किया था कि २५ बाल गर्भवतियों की जांच गई। परिणाम यह हुआ।

५ लड़कियों का गर्भ गिर गया।

३ लड़कियाँ बच्चा जनती बार मर गईं।

६ लड़कियों के जनने के समय अत्यन्त कष्ट हुआ, और उनके पेट से बच्चा औज़ार से निकाला।

५ को प्रसूत का रोग हो गया।

२ लड़कियाँ बच्चा पैदा होने से निर्बल होकर मर गईं।

३ लड़कियाँ दूसरी बार बच्चा जनने पर मर गईं।

२ तीसरी बार बच्चा जनती बार मर गईं।

जो बचीं उनमें से १२ की तन्दुरुस्ती जन्म भर को बिगड़ गई। अर्थात् कुल २५ में से १० मर गईं, १२ जन्म रोगिणी होगईं और कुल दो लड़कियाँ अच्छी रहीं।

सरकारी रिपोर्ट से ज्ञात हुआ कि छोटी उम्र में जो बच्चे पैदा होते हैं, उनमें १००० में ३३३ बच्चे एक ही वर्ष की आयु में मर जाते हैं। यानी हर तीन में एक बच्चा मर जाता है। सिस्टम आफ मेडीशन में डा० अलवर्ट कहते हैं कि "भारत में सब देशों से अधिक लोग पेशाब की बीमारी से मरते हैं, फी सदी ६५ युवक इस रोग के रोगी हैं।

भारत की तन्दुरुस्ती ३० या ४० वर्ष में खराब हो जाती है; इसका कारण यह है कि लड़कपन की शादी से उनका शरीर क्षीण हो जाता है और फिर ग़रीबी के कारण जल्दी ही बाल बच्चों की फिक्र का बोझा ऊपर पड़ जाता है, इससे उन्हें अत्यन्त मानसिक कष्ट उठाना पड़ता है। इसका नतीजा यह होता है कि उनकी तन्दुरुस्ती बिगड़ जाती है।

इस प्रकार लड़कियों की सामाजिक और शारीरिक परिस्थिति के आधार पर बाल विवाह की प्रथा जारी की गई। फलतः लड़कियों का उपकार होना तो दूर, उनकी शारीरिक और मानसिक सारी शक्तियाँ नष्ट हो गईं। तिस पर ३ करोड़ लड़कियाँ विधवा होकर बैठ गईं यह पृथक्।

लड़कों का इस प्रथा से समूल ही नाश हो गया, और आज देश भर ग़ारत हो गया।

भाइयों! यदि जाति और समाज को बल प्रदान करना हो तो इस भयानक प्रथा को दूर कर दो। अपने बच्चों पर तरस खाओ और उन्हें जीवित रहने दो, इस हत्यारे बालविवाह से उनकी रक्षा करो।

———

विषय-सूची

अध्याय पहला (स्वास्थ्य-विज्ञान)

प्रकरण

अध्याय दूसरा (शरीर-विज्ञान)

प्रकरण

१ जीवन-कार्य-चौबीस तत्त्व, जीव क्या है, जीव-कोष, प्राण क्या है, जीवन क्या है, मृत्यु क्या है।

२ त्रिदोष-वायु, वायु के रूप, पित्त, पित्त के रूप, कफ, कफ के गुण, प्रकृति, वात-प्रकृत के मनुष्य, पित्त-प्रकृति के मनुष्य, कफ-प्रकृति के मनुष्य।

३ त्वचा-स्पर्शेंद्रिय, केश और त्वचा, गंजापन।

४ हड्डियाँ-हड्डियों की संख्या की सारिणी, हड्डियों की जाति, हड्डियों के जोड़।

५ माँस-पेशी।

६ स्नायु—चेतना-गाँठ, शिरा और धमनी।

७ मर्मस्थल शरीर के मुख्य संस्थान।

अध्याय-तीसरा (शरीर-यंत्र)

प्रकरण

१ शरीर के तीन मुख्य विभाग—सिर और उसके यंत्र।

२ फुप्फुस या फेफड़ा—और श्वास-प्रश्वास क्रिया—वज़न और आकृति, श्वास-नली या टेटूआ, लंबाई और गठन, श्वास-क्रिया, श्वास की विशेषता, श्वास और प्रश्वास द्वारा क्या २ पदार्थ बाहर निकलते तथा भीतर जाते हैं, सीधे बैठना और खड़े होना, मुख से श्वास लेना, धूल

और श्वास, श्वास के लिये मुख्य बातें, घर कैसे हों, पालतू जानवर ।

३ हृदय और रुधिराभिसरण—रक्त, वायव्य पदार्थ, वर्ण-भेद, रक्त का परिमाण, उपादान, रक्त की क्रिया, रक्त की गति, रक्त में जीवन है ।

४ आहार-नालिका-पाचन-यंत्र और पाचन क्रिया—भोजन किस तरह शरीर का पोषण करता है—आहार-नालिका, पहला भाग, दूसरा भाग, तीसरा भाग, चौथा भाग, पाँचवाँ भाग, बाहरी सहायता, भोजन पचने में कितनी देर लगती है, विष्ठा, विष्ठा में क्या होता है, मल दुर्गंधित क्यों होता है ।

५ गुर्दे (मूत्र-यंत्र)—कार्य, आकृति, क्रिया, गुर्दे रक्त की शुद्धि किस भाँति करते हैं, मूत्र का परिमाण ।

६ प्लीहा (तिल्ली) और यकृत (जिगर)—वज़न और आकार, यकृत, क्लोम ।

७ मस्तिष्क—वज़न, झिल्ली और स्नायु, सुषुम्ना और पिंगला नाड़ी-मंडल, मस्तिष्क की रक्षा, मन ।

८ नेत्र और कान—आँख की बनावट, देखना, नेत्रों की रक्षा, कान, कान की बनावट, शब्द कैसे सुन पड़ता है, कान की रक्षा ।

९ नासिका और जिह्वा—घ्राणेंद्रिय, जिह्वा ।

१० दाँत और नाखून—दाँतों की बनावट, रोगी दाँत, दाँत सड़ने के कारण, दाँत की रक्षा कैसे की जाय ।

११ पुरुष-जननेंद्रिय और उसकी रक्षा—जननेंद्रिय की उपयोगिता, पुरुष-जननेंद्रियकी आकृति, इसकी बनावट; अंडकोष, जननेंद्रिय की रक्षा, यौवन का आगम, स्वप्न-स्राव, कुटेव ।

१२ स्त्री-जननेंद्रिय और उसकी रक्षा—स्त्री-जननेंद्रिय की विशेषता, स्त्री-जननेंद्रिय का आकार, स्त्री-जननेंद्रिय की बनावट, कामाद्रि, योनि, बृहदोष्ठद्वय, क्षुद्रोष्ठद्वय, भगाँकुर, सतीच्छद, विटप, जरायु (गर्भाशय) स्तन, स्त्री-जननेंद्रिय की रक्षा ।

अध्याय चौथा (गर्भाधान और प्रसव)

प्रकरण

१ गर्भाशय

२ ऋतुकाल—ऋतुकाल में सावधानी, असावधानी के दोष, ऋतु-स्नाता, गर्भाधान ।

३ गर्भ ।

४ गर्भ रहने का चिह्न—मासिक धर्म बन्द होना, गर्भाशय का सिकुड़ना, बच्चे के दिल की धड़कन, गर्भ में पुत्र-पुत्री का निर्णय, दौहृद-लक्षण, वर्ण और नेत्र, गर्भ का रक्त-संचार ।

अध्याय पांचवां (शिशु-पालन)

प्रकरण

२ आहार और जल—माता का दूध, दूध पिलाने की विधि, दूध पिलाने का ढङ्ग, माता का आहार, साफ़ दस्त, उत्तम आहार, स्नान, व्यायाम और जल, मृदु जुलाब, ख़ास बातें, दूध पीने का काल, धाय, बाहरी दूध पिलाने की सारिणी, १ से ९ मास तक के बच्चे को घण्टों के हिसाब से दूध पिलाना, बाहरी दूध का परिवर्तन, अजीर्ण।

३ नौ महीने बाद का आहार—फलों का रस, दूसरे वर्ष का आहार, दूसरे वर्ष के ख़तरे, १ वर्ष से १५ मास की आयु तक भोजन-विधि, १५ से १८ मास की आयु तक की भोजन-विधि, १८ मास के बाद, सयाने बच्चों का आहार, मिठाइयाँ और फल, बच्चों का वज़न, दस्त।

४ वस्त्र—पोतड़े, मौज़े और जूते।

५ बच्चों की पालन-विधि—तेल की मालिश, साधारण स्नान।

६ खेल-कूद - सोने के समय के वस्त्र, बिछौने, सिर के टोप, नींद और विश्रांति।

७ फुटकर बातें—बच्चों के लिये सुनहरी नियम, बच्चों की शक्ति विकास।

८ नियमित आदतों का अभ्यास – क़ायम क़ब्ज़,. पिचकारी।

९ साधारण भूल – पहली भूल, दूसरी भूल, तीसरी

भूल, चौथी भूल, पाँचवीं भूल, छठी भूल, सातवीं भूल, आठवीं भूल, नवीं भूल, दसवीं भूल, ग्यारहवीं भूल, बारहवीं भूल, तेरहवीं भूल, चौदहवी भूल, पन्द्रहवीं भूल, सोलहवीं भूल, सत्रहवीं भूल।

१० बुरी आदतें—उँगलियों और कपड़े तथा खिलौने आदि को मुँह में डालकर चूसना, दाँत से नाखून काटना या मिट्टी खाना, बिस्तर में दस्त-पेशाब करना, मूत्रेन्द्रिय को मसलना, झूले में हिलाना या गोद में लेना, अफ़ीम देकर सुलाना, हकलाकर बोलना, हठ करना।

११ बच्चों का रोना—बच्चों के रोने की खास-खास अवस्थाएँ, दुख-रहित हिचक-हिचक कर रोना, रोना नियमबद्ध है या नहीं, भूख या प्यास का रोना, बेचैनी से रोना, थकान या कमज़ोरी से रोना, घोर पीड़ा का रोना पेट का दर्द, कान की पीड़ा, विशेष चेतावनी।

१२ मुँह और दाँत—रोग कहाँ-कहाँ जड़ पकड़ते हैं, मुलायम भोजन, दाँत कब और कहाँ निकलने शुरू होते हैं।

१३ हरे-पीले दस्त और दूध डालना।

१४ सरलता से दूध छुड़ाना।

१५ निष्क्रमण—दन्तोद्भव, अष्टमंगल घृत।

१६ बच्चों के रोग—बच्चोंके रोग जानने का उपाय, ढूँडी का पक जाना, खाल लग जाना, दूध डालना, दूध न पीना, हँसली जाना, काग गिर जाना, आंख दुखना, खाँसी, तर खाँसी, काली या कूकर खाँसी, पेट चलना, कान बहना, फुटकर रोग, ज्वर।

अध्याय छठा (स्नान-पद्धति)

प्रकरण

१ स्नान का स्वास्थ्य पर प्रभाव—चमड़ी के लाभ, खून की नालियाँ।

२ स्नान के प्रकार—साधारण स्नान, तैरने का स्नान, फव्वारे और नल का स्नान, सूई-स्नान, वर्षा-स्नान, आर्द्रपट-स्नान, वाष्प-स्नान, वायु का स्नान, टरकिश स्नान, चार स्नान, सोतों का स्नान, वैज्ञानिक स्नान, अन्य स्नान, दर्द दूर करने के स्नान।

३ स्नान के विषय में कुछ जानने योग्य बातें—स्नान करने के स्थान।

४ स्नान के उपयोग।

५ जल-चिकित्सा आठ कटोरी पानी का प्रयोग, उषा जलपान-विधि, निद्राप्रद स्नान, शाँतिदायक स्नान, शक्ति-बर्द्धक स्नान, शीतल जल-प्रयोग, उष्ण जल-स्नान, जल प्रयोग, प्रस्वेद-स्नान, उष्ण वायु-स्नान, दूसरी

विधि, जलार्द्र पट-स्नान, कटि-स्नान, पाद-स्नान, औषधि-मिश्रित स्नान, औषधि-वाष्प-स्नान ।

अध्याय सातवाँ (भोजन)

प्रकरण

१ भोजन का वैज्ञानिक विश्लेषण—भोजन किसे कहते हैं, भोजन से लाभ, उत्तम भोजन, शरीर के मूल अवयव, पोषक द्रव्य, चर्बी, शर्करा, लवण, जल, तन्दुरुस्त शरीर के मूल अवयवों का परिमाण ।

२ दूध—दूध के सम्बन्ध की ख़ास बातें, शुद्ध दूध किसे कहते हैं, दूध अशुद्ध होने के कारण, दूध के द्वारा उत्पन्न होने वाले रोग, दूध का वैज्ञानिक विश्लेषण, स्त्री और पशुओं के दूध का अन्तर, अन्य बातें, मलाई, मक्खन, मक्खन के गुण ।

३ शाक—फल और मेवे, शाकों के गुण, फलों के गुण, मेवा ।

४ भोजन पकाने के लाभ—भोजन की विधि, किस ऋतु में कैसा भोजन करना चाहिए ।

अध्याय आठवाँ

(फलाहार और फलों की रोगनाशक शक्ति)

प्रकरण

१ फलों का महत्व—फल और दाँत, फलाहार, फलों के सम्बन्ध में आपत्ति, फलाहार-चिकित्सा ।

सादा जीवन, फल और उपवास, आगंतुक रोग।

२ सेव—विशेष, सेव की चाय, अंगूर, किशमिश की चाय की विधि, केला, खोपरा, नारियल, नीबू, संतरा, बेर, प्याज़, लहसुन, शर्बत बनाने की विधि, अंजीर, प्रदर का अनोखा नुसख़ा, गोभी, आलू, सेम, मटर, मसूर, गाजर, शलजम, टिमाटर।

अध्याय नवाँ (विष-भोजन)

प्रकरण

१ मदिरा—मदिरा भोजन नहीं है, मदिरा का मस्तक पर प्रभाव, मदिरा और जीवन, मदिरा और गृह-सौख्य, मदिरा का ख़ास प्रभाव, मदिरा पर नर-रत्नों की सम्मतियाँ, मद्य और खाद्य, खाद्य उष्णता की माप कैलोरी से, किस मद्य में कितना मादक द्रव्य होता है, मदिरा की औषध की रीति पर उपयोग, भारत और मदिरा, नेशन पत्र का लिखना।

२ तँबाकू—तम्बाकू विष है, विषैला प्रभाव, तम्बाकू के विषय में विद्वानों की राय।

३ अफ़ीम और गाँजा।

४ अन्य द्रव्य—भाँग, चरस, गाँजा, कोकीन, पान, चाय, क़हवा, कोको, कचालू, चटनी, अचार और गर्म मसाले विज्ञापनबाज़ और पेटेंट दवाइयाँ, माँसाहार, मांस-भक्षण की दृष्टि से डॉक्टरों की संख्या, मीठा और

अध्याय दसवाँ
(रोग-कीटाणु और घर के दुश्मन जंतु)

प्रकरण

अध्याय ग्यारहवाँ (जड़ी-बूटी)

प्रकरण

४ आंवला—आँवले के गुण, विवरण, उपयोग, च्यवन-प्राश सेवन की सामान्य विधि, आँवले का तेल।
५ बोलमोगरा।
६ तुलसी-गुण, विवरण, उपयोग, वनतुलसी, पहचान।
७ ब्राह्मी—विवरण, गुण, धर्म, उपयोग, ब्राह्मी-घृत, सारस्वतारिष्ट, सारस्वत-घृत, ब्राह्मी रसायन, मेध्य रसायन।
८ लहसुन-नीम, निंब-सत्व, निंबादि चूर्ण, निंब हारिद्र-खंड, घी-तेल, अपस्मार का आनुभविक प्रयोग, दूसरा उपाय, अर्श का उत्तम उपाय, निबौलियों का तेल।
९ भिलावा—विवरण, गुण-धर्म और उपयोग, हैज़े का अक्सीर उपाय, वायु के रोगों पर भिलावे का निर्भयता से उपयोग, भारी चोट का उपाय।
१० हल्दी—उपयोग, उपदंश रोग।
११ रीठा—विवरण, गुण, दोष और उपयोग, विषों पर प्रयोग, बिच्छू के विष पर, अनंत वायु पर, आधासीसी हिस्टीरिया और अपस्मार पर, नष्टार्तव पर, कफ़ पर।
१२ आक।

अध्याय बारहवां (मुष्टि-योग)

प्रकरण

१ सिर-दर्द, मृगी, हिस्टीरिया, मस्तिष्क के अन्य रोग, नेत्र-रोग, मुंडी का पाक, कान के रोग, नाक के रोग,

दाँत के रोग, मुख और जीभ के रोग, पेट के रोगों की दवा, तिल्ली, मुलैयन, पेट के कीड़े, घाव, फुटकर, पेचिश ।

अध्याय तेरहवाँ (प्रसिद्ध नुसखे)

प्रकरण

१ स्वर्ण-वसंत-मालती, मकरध्वज चन्द्रोदय, कस्तूरी भैरव मृतसंजीवनी सुरा, सुदर्शन-चूर्ण, दशमूल का काढा, चंद्रप्रभा, हिंग्वष्टक चूर्ण, हेमगर्भ, योगराज गुगुग्ल, वसंतकुसुमाकर, सुहागसोंठ, सितोपलादि. जवाहर मोहरा, दिवाल मुश्क मोतदिल, ख़मीरा गावज़ुबाँ अंबरी ख़मीरा मरवारीद, केशरंजन तैल, जवाकुसुम तैल, अमृत धारा ।

अध्याय चौदहवाँ (खास नुसखे)

प्रकरण

१ पारा-भस्म, पारे की गोली, कुश्ता फ़ौलाद, दूसरा, मोम का तेल, ताक़त की गोली पाचन की गोली, शक्ति वर्द्धक अर्क़, उन्मत्त अर्क, ताक़त की अंग्रेज़ी गोली, धातुक्षय पर प्रयोग, नायाब तिला, तर खुजली का अमीराना नुसख़ा, पुत्र उत्पन्न होगा, लज्जत का नायाब नुसख़ा, गर्भरोधक, चाँदी बनाना, एक नायाब नुसख़ा, पारे की गोली की विधि, पारद-भस्म, पारे का प्याला बनाना ।

अध्याय पन्द्रहवाँ (धातुओं की भस्म)

प्रकरण

१ स्वर्ण—स्वर्ण-भस्म, चाँदी, चाँदी-भस्म, ताम्र, ताँबे की भस्म, लौह-भस्म, मंडूर-भस्म, वंग-भस्म, सीसा-भस्म, अभ्रक-भस्म, स्वर्ण माक्षिक, हरताल-भस्म, संखिया-भस्म नं० १, संखिया-भस्म नं० २, सिंगरफ-भस्म, मूँगा-भस्म, हीरा-भस्म ।

अध्याय सोलहवाँ (आकस्मिक उपचार)

प्रकरण

१ घाव और चोट—पट्टी, छाती की हड्डी टूटने पर पट्टी बांधने की रीति,

२ विषैले जंतुओं का काटना—सर्प, बावला कुत्ता, या गीदड़ ।

३ आग और पानी के उपद्रव—आग मे जलना, पानी में डूबना ।

४ ज़हर खाना—उपचार, विष की जातियाँ, अम्ल विष तथा उपचार, क्षार विष तथा उपचार, सीसे का चूरा तथा उपचार, मिट्टी का तेल तथा उपचार, अफ़ीम और मारफिया तथा उपचार, धतूरा तथा उपचार, शराब, भंग-गाँजा-चरस तथा उपचार, कुचला और संखिया तथा उपचार, लू लगना तथा उपचार, फाँसी आदि से गला घुटना, बेहोशी ।

५ कृत्रिम श्वास-क्रिया—बेहोशी की हालत में ख़ास सँभाल, ख़ास चेतावनी।

अध्याय सत्रहवाँ (रोगी की सेवा)

प्रकरण

१ सेवा-धर्म।

२ रोगी के योग्य घर—साफ़ हवा, रोगी के कमरे में जलती हुई अँगीठी, परिश्रम, रोगी के कमरे को गर्मी पहुँचाना, हवा का बचाव।

३ फुटकर व्यवस्था—शोरगुल, मुलाक़ाती, काम-काज, चिकित्सा का चुनाव, धूर्त, मूर्ख और अताई वैद्य-डाक्टर, चिकित्सक का लक्षण, चिकित्सक के बुलाने का समय, दूत, दूत के कर्म।

४ औषध—अच्छी औषध, औषध के प्रकार, चालाक पंसारी, दवाइयों का बाहरी प्रयोग, औषध का समय प्रयोग, औषध का पिलाना।

५ पथ्य—भिन्न-भिन्न रोगों में पथ्यापथ्य।

६ परिचारक—परिचारक के गुण, परिचारक के इतने काम हैं।

७ आवश्यकीय ज्ञान—थर्मामीटर, अरिष्ट ज्ञान, ख़ास ख़ास रोगों के अरिष्ट लक्षण।

८ रोगियों के सम्बन्ध में विशेष ज्ञातव्य—शीघ्र आराम होने योग्य रोगी, दिन में सोने-न-सोने योग्य

रोगी, रोगी की शारीरिक स्वच्छता, रोग-मुक्त होने पर।

अध्याय अठारहवाँ (तपेदिक़)

प्रकरण

१ क्या तपेदिक़ असाध्य है—तपेदिक़ क्या है, तपेदिक़ के प्रधान चिह्न तपेदिक़ के भेद, पुश्तैनी तपेदिक़ पैदा होने के कारण, तपेदिक़ के कीड़े किस तरह जिस्म में पहुंचते हैं, तपेदिक़ फैलने के साधन, पुश्तैनी तपेदिक़ से संतान को बचाने के उपाय, बच्चों की कसरतें, तपेदिक़ को नष्ट करने के साधन, तपेदिक़ के रोगी के थूकने का प्रबन्ध, तपेदिक़ के रोगी का घर में रहने का प्रबन्ध, तपेदिक़ का इलाज, आब-हवा, आहार-विहार, आरोग्य होने पर।

अध्याय उन्नीसवाँ (हैज़ा)

प्रकरण

१ हमारे प्राचीन विचार और अंधविश्वास—हैज़े का इतिहास, हैज़े की उत्पत्ति के कारण, हैज़े का ज़हर फैलने की रीति, हैज़े के लक्षण, हैज़े के प्रभाव से होने वाले शारीरिक परिवर्तन, हैज़े की चिकित्सा, हैज़े का बन्दोबस्त, म्युनिसिपैलिटियों का कर्तव्य।

अध्याय बीसवाँ (प्लेग)

प्रकरण

अध्याय इक्कीसवाँ (कुछ महत्त्वपूर्ण रोग)

प्रकरण

सँभाल, चेचक की चिकित्सा, ख़सरा, उपचार, छोटी माता।

८ विदेशों से आये छूत के रोग—टाइफ़स, कारण, लक्षण, चिकित्सा, डेंग्यू, उपचार, डिप्थीरिया या कंठरोहणी, लक्षण, उपचार, पीला ज्वर, उपचार, अकाल ज्वर, (रिलेप्सिंग फ़ीवर) लक्षण, उपचार, काली खाँसी, लक्षण, उपचार।

९ छूत की बीमारियों से बचने के उपाय—छूत की बीमारी का अस्पताल।

१० त्वचा के रोग—खुजली, लक्षण, चिकित्सा, अलाइयाँ या मरोड़ियाँ, चिकित्सा, एग्ज़ीमा या छाजन, चिकित्सा, दाद, चिकित्सा, फोड़े और घाव, उपाय।

११ कृमि-रोग—केंचुआ, उपचार, केंचुए कैसे रोके जाते हैं, कद्दूदाना, मुख्य लक्षण, इनके फैलने की रीति और रोकने का उपाय, उपचार, चुनचुने, उपचार।

१२ फुटकर रोग—मुँह आ जाना, हिचकी, नकसीर, अंडकोष उतर आना, जोड़ों का दर्द और गठिया, मृगी या हिस्टीरिया, उपचार, अन्य वस्तु निगल जाना, शूल।

अध्याय बाईसवाँ (स्वाभाविक चिकित्साएँ)

प्रकरण

१ सूर्य-ज्योति-चिकित्सा—सूर्य का रँग, रँगों का

शरीर पर प्रभाव, रँगों के रोग-नाशक गुण, खास-खास रँगों का खास-खास रोगों पर प्रभाव, प्रयोग की विधि।

२ उपवास-चिकित्सा—रोग और उपवास, उपवास की रीति, नींद और प्यास, एनीमा, उपवास न करने योग्य, विशेष बात, उपवास की समाप्ति, उपवास के अनुभव. विचारणीय बातें।

३ दुग्ध चिकित्सा

४ अन्य चिकित्सा—मिट्टी की चिकित्सा, आध्यात्म-चिकित्सा, सहायक चिकित्सा।

अध्याय तेईसवाँ (यौवन-रक्षा)

प्रकरण

१ यौवन-आगम—बालक के स्वभाव पर माता-पिता की वयस का प्रभाव, स्कूली शिक्षा, नागरिक जीवन की सँभाल, सन्तानों की धार्मिक शिक्षा और सात्विक जीवन का प्रबन्ध, सदाचार, संयम।

अध्याय चौबीसवाँ (व्यभिचार)

प्रकरण

१ स्वाभाविक स्त्री-प्रसंग।

२ व्यभिचार का शरीर पर प्रभाव—स्पष्ट प्रभाव, अप्रकट प्रभाव, आमाशय पर प्रभाव, मूत्राशय पर

प्रभाव, रीढ़ की हड्डी, मस्तिष्क पर प्रभाव, सामूहिक प्रभाव, व्यभिचार का आत्मा पर प्रभाव, व्यभिचार का सामाजिक संगठन पर प्रभाव।

३ व्यभिचार-जन्य महारोग—प्रमेह, मूत्र ग्रंथि-प्रदाह, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, बेख़बरी में मूत्र-त्याग, शुक्र-स्राव, बहुमूत्र, स्वप्न-दोष, शीघ्रपतन, सुज़ाक, आतशक (गर्मी, उपदंश, सिफिलिस), प्रथम अवस्था, द्वितीय अवस्था, तृतीय अवस्था, पैत्रिक प्रभाव, उपदंश-रोग का परिणाम, नपुंसकता, शर्करार्बुद, गठिया (संधिवात), दर्द गुर्दा, भगंदर, कुष्ठ, स्त्रियों के विशेष रोग, प्रदर, बाधक रोग, हरित्पीड़ा, हिस्टीरिया, जरायु-प्रदाह, जरायु-अर्बुद, जरायु की स्थान-च्युति, डिंब-कोष प्रदाह, योनि-प्रदाह, कामोन्माद, वंध्यात्व।

४ इन महारोगों की चिकित्सा—प्रमेह-चिकित्सा, धातु-वर्द्धक प्रयोग, नपुंसक, सुज़ाक, आतशक, खाने की दवा, आतशक के मरहम, स्त्रियों के रोग, पुष्यानुग चूर्ण, हिस्टीरिया-उपचार, जरायुदाह-उपचार, जरायु-अर्बुद-उपचार, जरायु-स्थान-च्युति-उपचार, डिंब-कोष योनि-प्रदाह-उपचार, कामोन्माद-उपचार, वंध्यात्व-उपचार, फलघृत, फुटकर उपचार, भगंदर-उपचार, बद-उपचार, संधिवात (गठिया), पारद-विकृति-उपचार, कुष्ठ-उपचार, दर्दगुर्दा-उपचार, शीत-काल में सेवन

योग्य पाक, पाक सेवन करने में वैज्ञानिक युक्ति, कस्तूरी-पाक, मदन-मोदक, मूसली-पाक, एक उत्कृष्ट वीर्य-वर्द्धक पाक, गाजर-पाक ।

अध्याय पच्चीसवाँ

स्त्रियों का स्वास्थ्य और व्यायाम

प्रकरण

१ स्त्रियों की स्वास्थ्य-हानि—स्त्रियों की हीनावस्था के लक्षण, उसके कारण, बाल-विवाह, उत्तम भोजन का न मिलना, पतियों, घरवालों और समाज का दुर्व्यवहार, वर्तमान सभ्यता और शिक्षा, कुसंग, सामाजिक कुरीतियाँ, धन की बाहुल्यता, डंबल की कसरतें, व्यायाम से लाभ, व्यायाम की मात्रा तथा अधिक व्यायाम से हानि, व्यायाम का प्रारम्भ, तेल-मालिश ।

अध्याय छब्बीसवाँ (सौंदर्य-विज्ञान)

प्रकरण

१ सौंदर्य की व्याख्या—स्वास्थ्य का सौंदर्य पर प्रभाव, स्वभाव और मानसिक भावों का सौंदर्य पर प्रभाव, सौंदर्य नाश के कारण स्वरूप रीति-रस्म, आदतें और रोग ।

२ सौंदर्य के लिये आवश्यक बातें ।

३ केश-सौंदर्य—बाल धोने की रीति, कंघी या ब्रुश

करना, तेल बनाने की विधि, केश बाँधना, बालों का गिरना, बालों का सफेद होना, खिज़ाब, बालों को घूँघरवाले बनाना।

४ मुख-सौंदर्य—नेत्र, नेत्रों के भिन्न-भिन्न भाव, पलक, भौंह, नाक, कान, ओष्ठ, दांत, कीड़ा, दंत-मैल, मुख-दुर्गंध, कंठ-स्वर, ठोड़ी, गाल।

५ वक्षस्थल और धड़—स्तनों का उभार, कमर और पेट, समविभक्त शरीर, कृशता, कंधे और गर्दन।

६ हाथ और बाहु—भुजाओं की मालिश, नाखून।

७ पैर—गहने, पैरों का फटना, पैर में पसीना।

८ चमड़ी की रङ्गत—भोजन का रंगत पर प्रभाव, बाहरी चीज़ें, बफारा, साबुन का प्रयोग, धूप का प्रभाव, हार्दिक भावों का प्रभाव, शरीर-यंत्रों का त्वचा पर प्रभाव।

अध्याय सत्ताइसवां (दीर्घजीवन)

प्रकरण

१ क्या आयु बढ़ सकती है ?—अविवाहित अधिक मरते हैं।

२ दीर्घायु होने की रीतियां—सोम-प्रयोग, बनस्पतियाँ, इनके उत्पत्ति-स्थान।

अध्याय अट्ठाईसवां (गृह-निर्माण-कला)

प्रकरण

१ विचारने योग्य बातें—नागरिकता के ख़तरे, वायु, बच्चों की मृत्यु, बच्चों की मृत्यु का मूल-कारण, नवजात बच्चों की मृत्यु का कारण, लोगों का अज्ञान, पाख़ाने, सड़कें और गलियां, पशु, ख़ोंचेवाले, नालियां, वाटर-वर्क्स, खाद्य पदार्थ, धुआँ, खाद-कूड़ा, तङ्ग गली और मकान, सफ़ाई की आवश्यकता, म्युनिसिपैलिटियों का कर्त्तव्य, गवर्नमेण्ट क्या कर रही है, सरकार को क्या करना चाहिये।

२ ख़ास बातें।

अध्याय उनतीसवां (उपयोगी बातें)

प्रकरण

१ हस्तरेखा-विद्या— हाथ की बनावट, रेखाएँ, अन्य चिह्न।

२ मस्तिष्क-विद्या—कपाल, बाल, भौंह, बिरौनी, आँखें, कान, होंठ, दाँत, जीभ, मुख, गाल और ठोड़ी, गर्दन, मस्तिष्क के भाव।

३ स्वप्न-विज्ञान।

४ आकृति-विज्ञान।

अध्याय तीसवां (आध्यात्म-तत्त्व)

प्रकरण

१ आत्मा क्या है शरीर और आत्मा का संयोग, पुनर्जन्म, प्रारब्ध, उपनिषद्-तत्त्व, गीता-सार, सर्व-शक्तिमान् परमेश्वर, आत्मवत् सर्वभूतेषु।

सादे चित्रों की सूची

१ स्वस्थ पुरुष। २ स्वस्थ पुरुष के शरीर की गठन। ३ स्वस्थ पुरुष की मांस-पेशियाँ। ४ स्वस्थ पुरुष की बाहरी गठन। ५ नैरोग्य शरीर की स्वाभाविक माप। ६ स्वस्थ शरीर की दृढ़ता। ७ स्वस्थ लड़के और लड़कियों का क़द और वज़न अनुमान से। ८ स्वस्थ पुरुषों का क़द और वज़न अनुमान से। ९ कुएँ का गोला। १० जल को घरेलू रीति से शुद्ध करने की रीति। ११ पढ़ने के लिये बैठनेकी शुद्ध रीति। १२ पढ़ने के लिये बैठने की ग़लत रीति। १३-२६ रोगोत्पादक साधन (१४ चित्र)। २७ काढ़ने के लिये बैठने की शुद्धि रीति। २८ काढ़ने के लिये बैठने की ग़लत रीति। २९ लिखने के लिये बैठने की ग़लत रीति। ३० लिखने के लिये बैठने की शुद्ध रीति। ३१ चलने की ग़लत रीति। ३२ चलने का शुद्ध रीति। ३३ बैठने की ग़लत रीति। ३४ बैठने की शुद्ध रीति। ३५ त्वचा की भीतरी बनावट। ३६ अस्थि-कंकाल।

३७ वस्ति-गह्वर और वस्ति। ३८ पृष्ठ-वंश-कशेरुका। ३९ हाथ की माँस-पेशियों की गठन। ४० उरोगुहा और उदर-गुहा के भीतरी अंग। ४१ फुप्फुस या फेफड़ा। ४२ हृदय का कल्पित चित्र। ४३ आहार-नालिका। ४४ गुर्दे और मूत्र-वस्ति। ४५ खोपड़ी का ऊपरी पृष्ट। ४६ मस्तिष्क। ४७ मस्तिष्क की कार्य-प्रणाली। ४८ पुरुष जननेंद्रिय। ४९ शिश्न की बनावट। ५० शिश्न-दंडिका की सूक्ष्म रचना, सूक्ष्मदर्शक यंत्र द्वारा बढ़ाई हुई। ५१ मूत्राशय का पिछला भाग। ५२ अंड तथा उपांड। ५३ अंड और उपाँड की रचना। ५४ अंडकोष-छेदित। ५५ शुक्र-कीट। ५६ शुक्र-कीट परिवर्धित। ५७ नारी-जननेंद्रिय। ५८ गर्भा-शय लम्बाई के रुख कटा हुआ। ५९ उदर में गर्भाशय का स्थान और उसके विभाग। ६० गर्भाशय के स्थान का भीतरी विवरण। ६१ प्रवेश-द्वार का व्यास। ६२ वस्ति-गुहा के भाग। ६३ वस्ति-गुहा का अक्ष। ६४ अंत-रीय स्त्री-जननेंद्रिय। ६५ डिंब-कोष की रचना। ६६ बच्चे-दानी की लुआबदार झिल्ली। ६७ बच्चेदानी की झिल्ली गर्भ पर लिपटी है। ६८ इस झिल्ली की बनावट। ६९-७४ गर्भ की क्रमशः उत्पत्ति (६ चित्र। ७५-७७ गर्भ की क्रमशः वृद्धि (३ चित्र)। ७८ आँवल की बनावट। ७९ गर्भ की मासिक वृद्धि। ८० पाँच सप्ताह का गर्भ ८१ आठ सप्ताह का गर्भ। ८२ गर्भ का विकास। ८३

उदरस्थ गर्भ। ८४ श्रवण परीक्षा। ८५ गर्भ का रक्त-संचार ८६ पूर्ण गर्भ। ८७ प्रथम स्पर्शन। ८८ द्वितीय स्पर्शन। ८९ तृतीय स्पर्शन। ९० चतुर्थ स्पर्शन। ९१ नाल का बाहर निकलना। ९२-९९ शिरोदय के भिन्न-भिन्न रूप (८ चित्र)। १००-१०८ प्रसव के भिन्न-भिन्न रूप (९ चित्र)। १०९ शिरोदय। ११० बच्चेदानी को दबाना। १११ गर्भाशय का संकुचित होना। ११२ भ्रूण-कपाल। ११३ भ्रूण-कपाल का व्यास। ११४-११७ मूढ़ गर्भ के भिन्न-भिन्न रूप (४ चित्र)। ११८ जोड़िए बच्चे। ११९ स्वस्थ शिशु। १२० सबसे उत्तम गाड़ी। १२१ बच्चे को लिटाने की रीति। १२२ दूध पिलाने के लिये उठाने की रीति। १२३ बोतल से दूध पिलाने की रीति। १२४ बाहरी दूध पिलाने की सारिणी। १२५ बच्चे को तोलने की रीति। १२६ बच्चों के वस्त्र। १२७ बच्चों के वस्त्र। १२८ बच्चे को स्पंज करने की रीति। १२९ बच्चे का मुख साफ़ करना। १३० बच्चे के स्नान की तैयारी। १३१ बच्चे का स्नान। १३२ बच्चे का बिस्तरा। १३३ दूध का वैज्ञानिक विश्लेषण। १३४ उनके मूल-अवयव की सारिणी। १३५-१३७ खाद्य उष्णता की माप कैलोरी से (२ चित्र)। १३८ किस मद्य में कितना मद है। १३९ मांस और वनस्पति के पोषण-तत्व की सारिणी। १४० मांस भक्षण की दृष्टि से डॉक्टरों की संख्या। १४१-१४३ पिस्सू

की अवस्थाएँ (३ चित्र)। १४४ मक्खी की टाँग में हज़ारों रोग-जन्तु लिपट रहे हैं। १४५-१४८ मक्खियों की चार अवस्थाएँ (४ चित्र) १४६-१५१ मक्खी की टाँग में लिपटे हुए कीटाणु (३ चित्र)। १५२ शीशे पर मक्खी ने इतने कीटाणु छोड़े हैं। १५३ चौड़ी पट्टी पर हाथ लटकाया गया है। १५४-१५५ सकरी पट्टी पर हाथ लटकाया है। (२ चित्र)। १५६ बाँह को ऊपर की हड्डी टूट गई है। १५७ हाथ हृदय से ऊँचा करने से ख़ून निकलना बंद होगया है। १५८ पैर ऊपर उठाने से रक्त कम बहेगा। १५६-१६० रीफ़ गाँठ, ग्रेनी गाँठ (२ चित्र) १६१-१६३ पट्टी बाँधने की रीति (३ चित्र)। १६७ सिर की पट्टी। १६८-१७० सिर की चोटें (३ चित्र) १७१ जबाड़ा टूट गया है। १७२-१८१ भिन्न-भिन्न अंगों पर पट्टियाँ बाँधने की रीति (१० चित्र)। १८२-१८४ हाथ से रूमाल से बाँधकर गले में लटका लेने की रीति (३ चित्र) १८५-१८८ पैरों पर पट्टियाँ बाँधने की भिन्न-भिन्न रीतियाँ (४ चित्र) १८६ कुहनी के जोड़ उखड़ने पर ऐसी लकड़ी बनाओ। १६० छाती का भाग। १६१ पीठ का भाग। १६२ पैर की हड्डी टूटना। १६३ जाँघ की हड्डी टूट जाने पर। १६४ छाता और छड़ी से टाँग बाँधना। १६५ कुदाल और लाठी से बाँधना। १६६-१६८ स्ट्रेचर के भिन्न-भिन्न रूप (३ चित्र) १६६ ज़हरी दाँत। २००

कुहनी के ऊपर बाँध। २०१ बेहोश आदमी को आग लगे हुए घर से निकालना। २०२ धुआँ-भरे घर में से घसीट कर ले जाना। २०३ मुँह से पानी निकालने की रीति। २०४ बालक का पानी निकालना। २०५ पानी निकालने की दूसरी रीति। २०६ कृत्रिम श्वास दिलाने की रीति। २०७ दूसरी रीति। २०८ कृत्रिम श्वास की पहलीरीति। २०९ कृत्रिम श्वास की दूसरी रीति। २१० नाड़ी की गति जानने की सारिणी। २११-२१६ तपेदिक़ उत्पन्न करने के साधन (४ चित्र)। २१६, २२० तपेदिक़ फैलने के साधन (४ चित्र)। २२१-२२४ तपेदिक़ को नष्ट करने के साधन (५ चित्र)। २२५-२३२ तपेदिक़ को नष्ट करने के साधन (६ चित्र)। २३२ मच्छर । २३३ मच्छर क्यूलेक्स। २३४ मच्छर एनाफेलीज़ । २३५ मलेरिया के कीटाणुओं की वृद्धि। २३६ ख़ास-ख़ास रंगों का ख़ास-ख़ास रोगों पर प्रभाव। २३७ आतशक के कीटाणु। २३८ रोग की प्रथम अवस्था (स्त्री)। २३९ रोग की प्रथम अवस्था (पुरुष)। रोग की द्वितीय अवस्था (स्त्री)। २४१ रोग की द्वितीय अवस्था (पुरुष)। २३२ रोग की तृतीय अवस्था (पुरुष)। २४२ आतशक। रोगी की संतान की गुदा सड़ गई है। २४५ तृतीय अवस्था में जीभ सड़ गई है। २४५ सर्वांग में विष फूट निकला (स्त्री)। २४६ पिता के अपराध का दंड पुत्र इस

भयानक रीति से भोग रहा है। २४६ स्त्री-व्यायाम-डंबल की कसरत, २४८, २४९, २५०, २५१, २५२, २५३, २५४ २५५। स्त्री-व्यायाम-डंबल की कसरत, २५६, २५७, २५८, २५९, २६०, २६१, २६२, २६३। २६४। स्त्री-व्यायाम की कसरत। २६५ व्यायाम से सुगठित पुरुष शरीर। २६६ व्यायाम से सुगठित स्त्री शरीर। २६७-२७० व्यायाम से सुगठित शरीर (४ चित्र)। २७१ धीरे-धीरे पैर उठाओ। २७२ एक पैर सीधा उठाओ। २७३ कमर झुकाओ और पैरों को तान दो। २७४ कंधे के बल उलट जाओ। २७५ सर्वाङ्ग-सुन्दरी स्त्री। २७६ सुन्दरी, किंतु उदर, वक्ष और कंधे दोष-पूर्ण। २७७ ख़ूब चौड़ा ठोस वक्षस्थल। २७८ लम्बी सुडौल भुजाएँ। २७९ सुगठित बाहु और वक्ष। २८० उदर। २८१ एक सुन्दरी अपराधी स्त्री। २८२ सुगठित बाहु, वक्ष और उदर। २८३ गर्दन और कन्धे। २८४ जर्मन-महिला के नेत्र। २८५ जर्मन-कुमारी के नेत्र। २८६ चर्बी-रहित उदर। २८७ स्वस्थ शरीर और मस्तिष्क का विकास। २८८ जंघाएँ और पिंडलियाँ। २८९ शोक-पूर्ण उदास मुख। २९० उदर, जंघा और पिंडलियाँ। १९१ पुरुष-वक्षस्थल, धड़ और भुज-दंड। २९२ वक्षस्थल, धड़ और भुजा। २९३ सुडौल—सुन्दर मुख। २९४ सुन्दर नेत्र। २९५-२९९ नेत्रों के भिन्न-भिन्न भाव—उपेक्षा, इच्छा, लालसा, कामना, उद्दीपन (५ चित्र)। ३०० पूर्ण स्वस्थ

रंगीन चित्रों की सूची

आरोग्यशास्त्र पर कुछ चुने हुए विद्वानों और पत्रों की सम्मतियाँ—

चार शिक्षा-विभाग के उच्चाधिकारी

महामनीषिवर पूज्य श्री० मालवीय जी महाराज—

"पुस्तक बहुत सुन्दर है, शास्त्री जी को अनेक धन्यवाद"

महामहोपाध्याय डाक्टर पं० गंगानाथ झा, M. A., LL. D, D. Lit. वाइस चान्सलर इलाहाबाद यूनिवर्सिटी—

"...ग्रन्थ गाम्भीर्य, सौशब्द्य, आदि गुणों से युक्त, परम लोकोपयोगी और अति अद्भुत है...।" (संस्कृत से)

आनरेबुल मु० नारायण प्रसाद अष्ठाना, एडवोकेट हाईकोर्ट, वाइस चान्सलर आगरा युनिवर्सिटी, मैम्बर आफ़ कौन्सिल आफ़ स्टेट—

"...पुस्तक, स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों का ज्ञान कराने वाली युग-परिवर्तनकारी पुस्तक है।...इस पुस्तक से शास्त्री जी की और भी प्रसिद्धि होगी।......मैं चाहता हूँ, प्रत्येक सद्‌गृहस्थ नित्य के इस्तेमाल के लिए पुस्तक अपने पास रक्खे। (अंग्रेज़ी से)

डि० डाइरेक्टर ऑफ पबलिक इन्स्ट्रकशन विहार उड़ीसा—

"......आरोग्यशास्त्र हाईस्कूलों की लाइब्रेरियों और इनामों के लिये उपयुक्त समझा गया है वह आगामी सूची में दर्ज करलिया जायगा......।" (अंग्रेजी से)

चार उच्च राजवर्गी महोदय

सुप्रदीप्त मान्यवर कमांडिंग जनरल श्रीमोहन-शमशेरजंग बहादुर राणा K. C. S. I., नैपाल—

"...पुस्तक जनसाधारण को बहुत उपयोगी होगी और आयुर्वेदके विद्यार्थी व अभ्यास करने वालों को विशेषतः सहायता करने वाली है......।"

हिन्दी के उदीयमान लेखक—राजकुमार श्रीरघुवीरसिंहजी B. A. LL. B. सीतामऊ C. I.

"......आरोग्य शास्त्र हिन्दी के लिए एक गर्व की वस्तु है......हिन्दी में ऐसे ग्रन्थों का प्रकाशित होना देख मैं आवाक् रह गया हूँ। आपका यह असाधारण प्रयास धन्य है......।"

रावबहादुर श्रीठाकुर साहेब जोबनेर, श्री नरेन्द्र-सिंहजी, एज्यूकेशनल मिनिस्टर और सीनियर मेम्बर स्टेट कौंसिल-जयपुर राज्य—

"..........यह अपने ढँग की प्रथम पुस्तक है, लेखक ने जो सागर इस गागर में भरा है वह वर्णनातीत है, आरोग्य शास्त्र के प्रत्येक अंगोपांग को जो तारतम्य दिया है, निरा निराला है..........।"

हिज हाईनेस महाराजाधिराज बनारस के ए० डी० सी० लेफ्टिनेन्ट कुमुदचन्द्र चौधरी—

"यह प्रत्येक घरमें रखने योग्य एक अति उपयोगी पुस्तक है......।"

चार उच्च धर्माचार्य

काशी श्रीविश्वनाथ मंदिर के महामान्य महन्तश्री पं० महाबीर प्रसादजी महाराज—

"......ग्रन्थ असाधारण है, इसमें पाश्चात्य और पूर्वीय सिद्धान्तों का अद्भुत सम्मेलन है। जो बड़ी विद्वत्ता और परिश्रम से सम्पादन किया गया है।...ग्रन्थ मनुष्य मात्र को नित्य पाठ करना चाहिये। .... ।"

राधास्वामी सम्प्रदाय के परम आदरणीय धर्माचार्य, दयालबाग आगरा के श्री हुजूर साहेबजी महाराज—

"........कुछ दिन पूर्व मैंने डा० सेलमन साहेब की बनाई और पूना की किसी ईसाई संस्था से प्रकाशित एक

पुस्तक देखी थी। उसे देखकर मन में विचार उत्पन्न हुआ था कि ऐसी पुस्तक हिन्दी में प्रकाशित हो तो भारत के करोड़ों पीडितों को लाभ हो। आप के 'आरोग्य शास्त्र, ने मेरी आशा से कहीं बहुत अधिक मेरी इस इच्छा को पूर्ण कर दिया .... ।"

परम आदरणीय श्रीस्वामी आनन्दभिक्षुजी महाराज, दलितोद्धार संघ के सभापति—

"......आपने अपूर्व ग्रन्थ लिखा। सर्व सधारण के लिए इसकी बड़ी ज़रूरत थी......।"

श्री स्वामी जीवानन्द जी महाराज भारती—

"......इस ग्रन्थ को लिखकर आपने अपनी विद्या को सार्थक कर दिया। आप धन्य हैं......।"

चार प्रमुख डाक्टर

महामहोपाध्याय कविराज श्री गणनाथ सेन, सरस्वती, M. A., L. M. S. विद्यानिधि, कविभूषण, अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन और विद्यापीठ के सभापति—

......ग्रन्थ अति उपयोगी है, खूब परिश्रम हुआ है ......।" (संस्कृत से)

कैप्टिन के० एस० निगम, M. D., F, R. E. S., रीडर इन सरजरी, किंग जार्ज मेडिकल कालेज-- लखनऊ—

"······पुस्तक हिन्दी प्रेमियों और अंग्रेज़ी से अनभिज्ञों के लिये बहुत लाभदायक एवं मनोरंजक है ······।"

कैप्टिन R. S. गुप्ता, M. B. B. S.,D. T.M. & H. M. R. C. P. (E) इन्चार्ज मेडिकल आफ़ीसर बलरामपुर अस्पताल, लखनऊ—

'······ग्रन्थकार ने अथक परिश्रम किया है। भाषा सरल है और ग्रन्थ चित्रों से भरपूर है। मेरी दृढ़ सम्मति है कि पुस्तक सर्वसाधारण की प्रत्येक स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यक्ताओं को पूरी करेगी।······।

डा० त्रिलोकीनाथ वर्मा B. Sc., M. B. B. S., F. R. F. P. S. (ग्लासगो) D. T. M. (लिवरपूल) L. M. (डब्लिन) फैलो रायल सोसायटी ऑफ़ ट्रोपीकल मेडिशनस एण्ड हाइजीन लन्डन। भूतपूर्व सीनियर प्रोफेसर एनाटोमी किंग जार्ज मेडीकल कालेज,लखनऊ—

"·········पुस्तक को सर्वाङ्ग में परिपूर्ण बनाने में कुछ कसर उठा नहीं रखी गई, यह पुस्तक औषध शास्त्र

और स्वास्थ विज्ञान पर एक परिपूर्ण 'इनसाइक्लोपेडिया' है। पुस्तक सर्वसाधारण और विद्यार्थी दोनों के लिये समान लाभदायक है ·······।" (अंग्रेज़ी से)

चार लोक प्रख्यात् वैद्य

राजपूताने के लोकविख्यात राजवैद्य, जयपुर संस्कृत कालेज के आयुर्वेद विभाग के प्रधान आचार्य, आयुर्वेद शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित, आयुर्वेद मार्तण्ड श्री स्वामी लक्ष्मीरामजी महाराज—

"······ग्रन्थ रत्न को देखकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुआ। इसमें सद्गृहस्थों के उपयोगी विषयों को खूब सुन्दर रीति से चुना गया है। मैं विश्वास करता हूँ कि मातृभाषा के भाण्डागार में इस उज्ज्वल ग्रन्थरत्न का खूब आदर होगा ·····।" (संस्कृत से)

अखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महामण्डल के सभापति, अ० भा० आ० विद्यापीठ के सदस्य—, प्रयाग के प्रख्यात चिकित्सक, आयुर्वेदपंचानन पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल-भिषङ्मणि, सम्पादक सुधानिधि—

"···पुस्तक बड़े परिश्रम के साथ लिखी गई है। और स्त्री पुरुष सभी के काम की है। यदि आयुर्वेद विद्यापीठ के

परीक्षा के लिये साधारण ज्ञान प्राप्ति (जनरल नालेज) के लिये इसके उन अंशों का उपयोग किया जाय जो पाठ्य क्रम में वर्णित हैं तो इससे परीक्षार्थियों को अच्छी सहायता मिल सकेगी ...... ।"

आयुर्वेद शास्त्र के महान विद्वान, दक्षिण भारत के श्रेष्ठ चिकित्सक, अखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ के सभापति, पं० यादव जी त्रिकमजी आचार्य, बम्बई—

"......पुस्तक बहुत उपयोगी, और सुन्दर है, सब आवश्यक विषयों का इसमें उचित समवेश है...... ।"

राजपूताना के विख्यात चिकित्सक, पंजाब यूनिवर्सिटी के आयुर्वेद के भूतपूर्व सीनियर लेक्चरर, आयुर्वेदमहोपाध्याय श्री कल्याण-सिंह जी अजमेर —

"......बधाई, ग्रन्थ में कोई कोर कसर नहीं रही, कमाल तोड़दिया, ग्रन्थ सैकड़ों वर्ष तक अमर रहेगा, हिन्दी साहित्य में इसकी टक्कर का कोई ग्रन्थ नहीं। यह आयुर्वेद शास्त्र के नवीन युग का नवीन ग्रन्थ हुआ। यह मनुष्य मात्र का सच्चा मित्र और सलाह कार है...... ।"

चार उच्च आफीसर

मानतीय राय विश्वंम्भरनाथ साहेब, चीफ-जस्टिस-चीफ कोर्ट-अवध-लखनऊ—

"......पुस्तक में बड़े भारी प्रयत्न से कठिन और आवश्यक चिकित्सा और स्वास्थ्य सम्बन्धी विषयों को सरल भाषा में लिखा गया है।...संक्षेप में, यह अपने विषय की इनसाइक्लोपेडिया है। मेरे बिचार में पुस्तक सर्वसाधारण और बिद्यार्थी दोनों के काम की है।......(अंग्रेज़ी से)

रायबहादुर पं० शुकदेव बिहारी मिश्र रिटायर्ड दीवान रियासत छतरपुर—

"......इस में खूवी यह है कि पूर्वीय और पाश्चात्य सिद्धान्तों को मिलाकर दोनों का लाभ पाठकों को दिया है।......ग्रन्थ उपादेय है।"

निज़ाम हैदराबाद के अर्थविभाग के उच्च-अधिकारी श्री बाबू सूर्यप्रतापजी श्रीवास्तव—

"......लेखक अपने अनुभव, योग्यता, पाण्डित्य और प्रतिभा से जितना काम ले सकता था—इस पुस्तक में लिया है। हिन्दी संसार में उसने प्रथम ही भारी ख्याति प्राप्त कर ली है—यह उसकी असाधारण रचना है। जिस भाषा में ऐसे ग्रन्थ रत्न तैयार होने लगे उसका अहोभाग्य।

ग्रन्थ प्रत्येक गृहस्थ के गले का हार होने योग्य है। सुन्द-रता की दृष्टि से ऐसी पुस्तक किसी हिन्दुस्तानी भाषा में छपी नहीं देखी गई……।"

मेरठ के प्रसिद्ध रईस और आ० डिप्टीकलक्टर पं० राजेन्द्रनाथ दीक्षित B.A, L.L.B, एडवोकेटः-

"……इस ग्रन्थ को लिखकर आपने सर्व साधारण को एक ऐसा आशीर्वाद दिया है कि जिसकी बदौलत पीढ़ियों तक उनके बाल बच्चे फलते फूलते रहेंगे। आप का यह कार्य एक महान् यज्ञ के समान पुण्य दाता है……।"

चार श्रीमन्त सेठ महोदय

दानवीर श्रीमान् सेठ रामगोपालजी मोहता बीकानेर-

"………पुस्तक सर्वसाधारण के ही नहीं, चिकि-त्सकों के भी बड़े काम की है। इससे जनता को बड़ा लाभ पहुंचेगा। …… ।"

दानवीर श्रीमान् सेठ घनश्यामदासजी बिरला—

"……आपकी पुस्तक अच्छी है और संग्रह करने योग्य है……।"

श्रीयुक्त बा० राजनारायण इन्द्रवीर महरोत्रा, मुरादाबाद—

"……ग्रन्थ वास्तव में अद्वितीय है, और तमाम चिकित्सा-साहित्य का राजा है……ऐसा ग्रन्थ देखने की मैंने कभी आशा न की थी……।"

श्रीयुक्त सेठ केदारनाथजी गोइनका, मारवाड़ी पुस्तकालय के जन्मदाता, दिल्ली के प्रख्यात व्यापारी और प्रसिद्ध साहित्य सेवी—

"……आरोग्य शास्त्र अपूर्व है, हिन्दी में ऐसी दूसरी पुस्तक नहीं। छपाई सफाई में कमाल हुआ है। मैं निरंतर पढ़ता हूँ……।"

चार सम्पादक महोदय

श्री पण्डित दुलारेलाल जी भार्गव,—सम्पादक 'सुधा' लखनऊ।

"……आरोग्य-शास्त्र आपकी अमर रचना है। यह हिन्दी साहित्य का शृङ्गार है। आशा है इसकी जनता में वह प्रतिष्ठा होगी जिसके वह योग्य है……।"

प्रसिद्ध हिन्दी उपन्यास सम्राट्, प्रेमचन्द जी—सम्पादक हंस, माधुरी,

"……बीसों बड़े २ अंग्रेज़ी और हिन्दुस्तानी चिकित्सा और स्वास्थ्य सम्बन्धी ग्रन्थों की ज़रूरत इस एक किताब से पूरी हो जाती है। गेटप बहुत ही बढ़िया……।"

भारत प्रख्यात 'कल्याण' पत्र के सम्पादक साधुजीवी सेठ हनुमानप्रसाद जी पोद्दार।

"......ग्रन्थ बहुत बड़ा और उपादेय है, सब नहीं पढ़ पाया हूँ। परन्तु जितना पढ़ पाया हूँ उतना बहुत ही उपयोगी है......आपके परिश्रम की क्या प्रशंसा की जाय।... पुस्तक बहुत ही उपयोगी और संग्राह्य है..."

चाँद (उर्दू) के प्रधान सम्पादक मुंशी कन्हैयालाल साहेब M. A. L. L. B. एडवोकेट हाईकोर्ट इलाहाबाद—

"......आरोग्य शास्त्र देखा। अपूर्व है। ऐसी सरल भाषा में ऐसे गम्भीर विषयों को ऐसे खुलासा तरीके से लिखना आप ही का काम था। आपही इसके अधिकारी थे। ठाट बाट की दृष्टि से तो ग्रन्थ दुलहिन है......।"

चार प्रमुख पत्र

पाइनियर, प्रयाग—सरल भाषामें स्वास्थ्य विधान बताया गया है। अपने विषय की यह उत्कृष्ट पुस्तक है जो पूर्वीय और पाश्चात्य सिद्धान्तों को मनन करके बनाई गई है......।" (अंग्रेज़ी से)

लीडर, प्रयाग—"...पुस्तक ग्रन्थकार के पूर्वीय और पाश्चात्य ज्ञान के पूर्ण पण्डित होने का प्रमाण है।

पुस्तक बिलकुल अनुभव में आये हुए स्वास्थ्य और आरोग्य सम्बन्धी गवेषणाओं का ख़ज़ाना है। जिन्हें जानकर मनुष्य स्वस्थ और नीरोग रह सकता है...... ।"

(अंग्रेज़ी से)

भारत, प्रयाग—शास्त्री जी ने "आरोग्य-शास्त्र, लिखकर जनसमाज का असीम कल्याण किया है। प्रत्येक सद्‌ग्रहस्थ तथा सद् वैद्य को एक प्रति सदा पास रखनी चाहिये......।"

कर्मवीर, खँडुआ—......यह पुस्तक लिखकर शास्त्री जी ने लोगों का बहुत उपकार किया है। यह १०० में ५० से अधिक अवसरों पर लोगों को शहरों की ओर उपचार के लिये दौड़ने से बचावेगी......।"

संजीवन-ग्रन्थमाला की

आरोग्य, गृहजीवन और गृह चिकित्सा सम्बन्धी

चालीस पुस्तकें

जिन्हें

उत्तर भारत के श्रेष्ठ चिकित्सक और महान् ग्रंथकार

आचार्य श्रीचतुरसेन शास्त्री

सब काम छोड़ लिख रहे हैं

तथा

जिन्हें हिन्दुस्तान की छः भाषाओं में प्रकाशित करने का

हमने अधिकार प्राप्त किया है

इस वर्ष में केवल हिन्दी और उर्दू के संस्करण

ही प्रकाशित होंगे।

स्थाई ग्राहकों के नियम।

१—इस सूची में प्रकाशित चालीसों पुस्तकों का केवल हिन्दी उर्दू संस्करण इस वर्ष में प्रकाशित होगा। और केवल इन्हीं दो भाषाओं के ग्राहकों के नाम स्थायी ग्राहकों की श्रेणी में रजिस्टर कराये जावेंगे।

२—प्रत्येक पुस्तक की पृष्ठ संख्या २०० के लग भग होगी और प्रत्येक पुस्तक का मूल्य १) होगा। परन्तु स्थायी ग्राहकों को पौने मूल्य में, अर्थात् ।||) में एक पुस्तक मिलेगी। डाक खर्च ग्राहक के ज़िम्मे होगा, यदि एक पैकेट में दो तीन मित्र एक साथ पुस्तकें मंगावेंगे तो खर्च में किफ़ायत हो सकेगी।

३—पुस्तकों की भाषा बहुत सरल, बोलचाल की भाषा होगी और उसे प्रत्येक स्त्री पुरुष आसानी से समझ सकेंगे।

४—ज्यों ही कोई पुस्तक प्रकाशित होगी उसकी सूचना एक कार्ड द्वारा ग्राहक के पास भेज दी जायगी। उसके एक सप्ताह बाद वी० पी० भेजी जायगी, यदि किसी ग्राहक को कोई पुस्तक लेना अस्वीकार हो तो उन्हें उचित है कि वे तुरन्त सूचना दे दें।

५—मराठी, गुजराती, बँगला और अंग्रेजी भाषा में अनुवाद ज्यों ही तैयार हो जावेंगे त्यों ही इन भाषाओं के ग्राहकों के आर्डर रिज़र्व किये जावेंगे, और उसकी सूचना समाचार पत्रों में दे दी जायगी, इससे पूर्व इस प्रकार के पत्रों पर ध्यान नहीं दिया जायगा।

६—स्थायी ग्राहकों को कोई रक़म फीस आदि भेजने की ज़रुरत नहीं। केवल, कार्ड पर स्थाई ग्राहक बनाने की स्वीकृति तथा नाम पता भर कर भेजना काफी होगा।

'व्यवस्थापक'

प्रकाशन-विभाग,

चालीस ग्रन्थों की संक्षिप्त विषय सूची

१ अमीरों के रोग—अमीर लोगों की रोगोत्पादक बुरी आदतें, मेदरोग, बहुमूत्ररोग, मधुमेह, ध्वजभंग, मन्दाग्नि, बवासीर, क्षय, तपेदिक़, उन्निद्ररोग, अन्य फुटकर रोग, स्वास्थ्य विधान।

२--युवती शिक्षा—विवाह, विवाह के तत्काल बाद का जीवन, पति क्या चीज़ है? सुसराल में रहना, रोग और लज्जा, नववधू की दिनचर्या, पुरानी बहू के कर्तव्य, पति का परिवार, ऋतुकाल का रहन-सहन, संयम और धैर्य, रसोई और पाक विधान, घर को सुसज्जित करना, प्रथम सन्तति, सन्तान का पोषण, पड़ौसिनें और सहेलियाँ, महमान।

३--कुमारी दर्पण—कुमारियों की अच्छी आदतें, कुमारियों की बुरी आदतें, उन्हें क्या सीखना चाहिये, सूई और क़सीदे का काम, भोजन बनाना, स्वच्छता, गायन वादन कला, चित्रकारी, वस्त्र रंगना, प्राचीन चौसठ

कला चौदह विद्या, तमीज़ और सलीक़ा, व्यायाम, व्याह शादियों के जमघट में, कन्यागीत, सफ़र की सावधानी, मेले ठेले में, आभूषण, शील और विनय, भाई बहनों और गुरुजन से बर्ताव, स्यानी कन्याएँ, माता पिताओं का संरक्षण।

४-युवक पथ प्रदर्शक—यौवन क्या चीज़ है? युवकों की दिनचर्या, युवकों का आहार, स्कूल और कालिज का जीवन, मित्र मण्डली, पुस्तकें, व्यसन, व्यायाम और भ्रमण, कुटेव और उनसे रक्षा, सुनहरी उपदेश।

५-नवदम्पत्ति मित्र—दाम्पत्य रहस्य, बाल पति पत्नी, विषम जोड़, समयोग दम्पति, प्रेम मीमांसा, स्त्री पुरुष की कलह और उसके कारण, स्त्रियों की अनुचित माँगें, पतियों के अत्याचार, यदि स्त्री घर में अकेली हो, गर्भ काल की चर्या, सम्भोग, नित्यकर्म, सामाजिक प्रतिबन्ध, सन्तान सीमा, रोगी होने पर, पारिवारिक जीवन, एकाकी होने पर।

६—वृद्धावस्था के रोग—वृद्धावस्था क्या है, वृद्धावस्था के आगमन के कारण, वृद्धावस्था में स्वस्थ रहने की विधि, कफ़ और श्वास के रोग, मन्दाग्नि और क़ब्ज़, व्यायाम और प्राणायाम, दिनचर्या।

७—विधुर जीवन—विधुर जीवन की प्राकृत कठिनाइयाँ, ४० वर्ष की आयु से पूर्व, अधेड़ावस्था में, वृद्धावस्था में,

खान पान का संयम, अध्ययन--स्वाध्याय, दिनचर्या, ससन्तान विधुर, एकाकी जीवन, धन-सम्पन्न विधुर, जीवन ध्येय।

८—स्वास्थ्य-सलाहकार—स्वास्थ्य क्या है, स्वस्थ रहने की विधि, दिनचर्या, ऋतुचर्या, आहार, नित्य-कर्म, दैनिक व्यायाम, बच्चों की सम्हाल, रोगी होने पर, रोग-मुक्त होकर, विशेष बातें।

९—स्वयंचिकित्सक—त्रिदोष, रोग, रोगी परीक्षा, मल-मूत्र परीक्षा, ज्वर और तपेदिक़, मन्दाग्नि, अजीर्ण और अर्श, संग्रहणी अतिसार और पेचिश, मृगी, हिस्टीरिया और स्नायुरोग, वात रोग, रक्त विकार और कुष्ट, उदर रोग, स्त्री रोग, बाल रोग, ऊर्ध्वजंत्रुगत रोग, वाजीकरण, रसायन, फुटकर बातें, फुटकर नुस्खे।

१०—घरेलुचुटकुले—जुकाम, चेचक, मोतीभरा, हैज़ा, अजीर्ण, मन्दाग्नि, बवासीर, प्लेग, विष, सर्पदंश, सिरदर्द, नेत्ररोग, प्रदर, प्रमेह, श्वास, कास, नकसीर, मूर्च्छा, बालरोग आदि पर ५०० अति सस्ते कौड़ियों मोल के अनुभूत नुस्खे।

११—पाकेट वैद्य—आसव, अरिष्ट, चूर्ण, वटी, अवलेह-पाक, घृत तेल, मलहम, लेप, रस, भस्म, क्वाथ, अर्क, अंग्रेज़ी दवाइयाँ।

१२—गो पालन—गायों के पालन से लाभ, गायों की नस्ल, दाना चारा, गायों के रहने का स्थान, दूध, घृत, मक्खन, छाछ, ग्याभन गाय, गायों के बच्चे, डेरीफार्म, सांड, गायों के रोग और उनकी चिकित्सा।

१३—आतशक—आतशक की उत्पत्ति और उसके कृमि, आतशक की प्रथम अवस्था, दूसरी अवस्था, तीसरी अवस्था, चिकित्सा, सन्तान पर प्रभाव।

१४—सुज़ाक—सुज़ाक कैसे होता है, प्रारम्भिक लक्षण, उसका शरीर पर भीतरी प्रभाव, चिकित्सा, आधुनिक इलाज, सावधानी।

१५—छूत की बीमारियाँ—हैज़ा, प्लेग, चेचक, क्षय, कोढ़, खाज, चर्मरोग और मोतीझरा।

१६—नपुंसकता—नपुंसकता के लक्षण, नपुंसकता के कारण, झूठा भ्रम, नपुंसकता दूर करने के प्राकृत साधन, नुसख़े।

१७—प्रमेह—प्रमेह की व्यापकता, प्रमेह के प्रकार, प्रमेह से बचने के साधन, पुराना प्रमेह रोग, प्रमेह की चिकित्सा।

१८—बांझपन—बाँझ होने की भ्रान्ति, बाँझ के लक्षण, साध्य बाँझदोष, चिकित्सा, ख़ास बातें।

१९—सन्तानिरोध—भारत की राष्ट्रीय सम्पत्ति और बढ़ती हुई जन-संख्या, भारत के दरिद्र परिवार, सन्तान सीमा निरोध के अधिकारी, सन्तान निरोध के आधुनिक तरीक़े, सन्तान निरोध के सरल उपाय, संयम।

२०—शिशुपालन—जन्म के प्रारम्भिक चार सप्ताह, छः मास तक की संभाल, भोजन, स्नान, खेलकूद, वस्त्र, आदतें, गृह शिक्षण, चरित्र संगठन, शिक्षा, रोग और उनकी चिकित्सा।

२१—गृहस्थजीवन—घर कैसा हो, आय को कैसे ख़र्च किया जाय, मेहमानदारी, पशुपालन, नौकर, व्यवसाय, पड़ोसियों से व्यवहार, मित्र और सम्बन्धी, घर में सदैव बनी रहने वाली चीज़ें, शादी और त्योहार, विपत्ति का काल।

२२—सात महारोग—कुष्ट, क्षय, श्वास, संग्रहणी, उन्माद, वातव्याधि, सन्निपात।

२३—व्यायामपद्धति—व्यायाम से लाभ, डम्बल, पैरेलल-बार, हाईजम्प, मुद्गर, लाठी, कुश्ती, दण्ड, बैठक, फुटबाल, क्रिकेट, हाकी, फुटकर।

२४—क़ब्ज़—क़ब्ज़ की व्यापकता, क़ब्ज़ के कारण, प्राकृतिक उपचार, क़ब्ज़ दूर करने वाले प्रयोग।

२५—प्रसव—प्रसवकाल, प्रसव की आवश्यक चीज़ें, दाई, प्रसव की रीति, प्रसव की कठिनाइयां, प्रसव के बाद, प्रसूति का आहार, बच्चों की सम्हाल, प्रसूति रोग और उपचार।

२६—बच्चों का स्वास्थ्य—साधारण सम्हाल, नियमित दिनचर्या, भोजन और वस्त्र, व्यायाम और परिश्रम, विश्राम, पठनप्रणाली, स्कूली जीवन पर दृष्टि, खेल कूद, संगति, धार्मिक शिक्षा।

२७—विष भोजन—शराब, अफ़ीम, गाँजा, भाँग, चरस चाय, क़हवा, काफ़ी, तम्बाकू, पान, कोकीन, और अन्य विष।

२८—व्यवहारिक योग—योग सम्बन्धी बीस भिन्न २ प्रकार के सरल आसन, चित्र सहित, जिनसे अनेक रोग दूर होते हैं।

२९—दीर्घायु—आयु बढ़ कैसे सकती है, आधुनिक और प्राचीन दीर्घायु पुरुष, दीर्घायु होने के प्रयोग, योग के विधान।

३०—रोगी की सेवा—रोग के चारपाद, परिचारक, औषध, पथ्य, रोगी के लिये मकान, छूत के रोगियों की व्यवस्था, आरोग्य होने पर, अरिष्ट लक्षण, फुटकर बातें।

३१—वबाई रोग—हैज़ा, प्लेग, अकालज्वर, महामारी, इन्फ़्लुएँज़ा, कालाज़ार।

३२—स्त्रियों के रोग—प्रदर, बाधक रोग, हरित्पीडा, हिस्टीरिया, जरायुप्रदाह, जरायु अर्बुद, जरायु स्थानच्युति, डिम्बकोष प्रदाह, योनिप्रदाह, कामोन्माद, बन्ध्यात्व।

३३—गर्भाधान—ऋतुकाल, गर्भधारण की सावधानियाँ, गर्भिणी का आहार विहार, गर्भवती के रोग, अकाल गर्भच्युति, गर्भ न रहने के कारण, पुंसवन क्रिया, नौ मास की सम्हाल।

३४—गृह निर्माण—भूमि का चुनाव, रुख और वातावरण, आवश्यक सामग्री, भिन्न २ मकानों के डिज़ाइन, वारनिश और रंग, सजावट, प्राचीन वास्तुशास्त्र, फुटकर बातें।

३५—विधवा जीवन—२५ वर्ष की आयु तक, वैधव्य महिमा, प्रौढावस्था की विधवाएँ, शिक्षा और उद्योग, सामाजिक और कानूनी त्रुटियाँ, वृद्धाविधवाएँ, विधवाओं की दुरवस्था, सर्व साधारण का कर्त्तव्य, विधवा विवाह।

३६—ग्राम्य जीवन—ग्राम्य जीवन का महत्व, शिक्षितों के लिये गावों में उद्योग धन्धे, ग्राम्य संगठन, ग्रामीण-

जनों का सुधार, आदर्श गाँव, योरोप के गाँव और ग्रामीणों का जीवन, गाँवों के बच्चों की शिक्षा, ग्राम्य बैंक।

३७—नगर जीवन—नगर जीवन की विपत्तियाँ, नागरिक जीवन से चरित्र नाश, गरीबों का नगरवास, नगर के खाद्य और रहन सहन, नगर के ख़तरे, भारतके प्रधान नगरों का सिंहावलोकन।

३८—ब्रह्मचर्य साधन विधि—ब्रह्मचर्य क्या है, ब्रह्मचर्य के विषय में प्राचीन भारतीय मत। प्राचीन काल में ब्रह्मचर्य का आदर, ब्रह्मचर्य की कठिनाइयाँ, युवकों का ब्रह्मचर्य, विवाहितों का ब्रह्मचर्य, अधेड़ अवस्था में ब्रह्मचर्य, वृद्धावस्था में ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचर्य साधना के व्यवहारिक प्रयोग, युवतियों का ब्रह्मचर्य।

३९—हज़ार नुसखे—भिन्न २ रोगों पर प्रसिद्ध हकीमों और वैद्यों के एक हज़ार अलभ्य और चुनीदा नुसखे।

४०—नित्य नियम—सात्विक जीवन, सन्ध्यावन्दन, स्त्री पुरुषों के नित्य गाने योग्य गायन, बच्चों के गीत, स्वाध्याय, धर्म विधान, व्यवहारिक सिद्धान्त, सामाजिक सभ्यता, आध्यात्म तत्व, भगवत्स्मरण।

माला की तीन पुस्तकें तैयार हैं
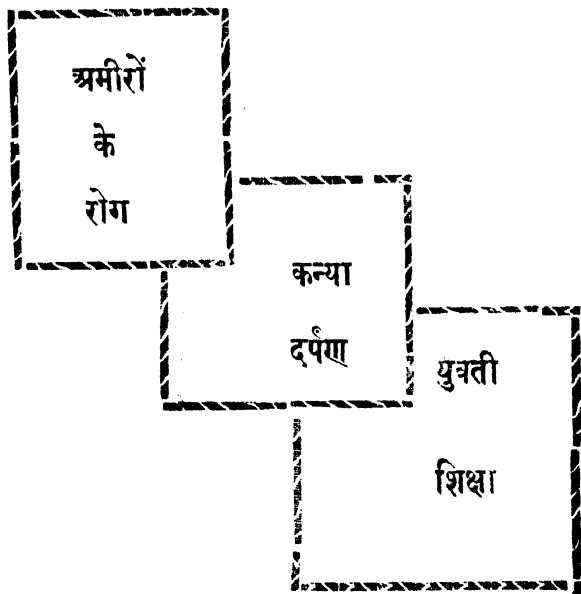
आज ही कार्ड लिखिए !!!

महान् ग्रन्थकार आचार्य श्रीचतुरसेन शास्त्री की

अन्य पुस्तकें

१—हृदय की परख (उपन्यास)—जगत् में कितने लोग पाप करते हैं। परन्तु महान् बुद्ध ने कहा है—'पाप हुआ है-इसकी अपेक्षा-पाप क्यों हुआ है, यह देखना चाहिए।' कलाविद् ग्रन्थकार ने कुछ उन्नत मन व्यक्तियों की मानसिक दुर्बलता के कोमल अंग पर प्रहार किया है। इस उपन्यास के लगभग सभी पात्र किसी अंश तक पाप कर चुके हैं, पर पाठक के हृदय में उनके प्रति न केवल सहानुभूति, प्रत्युत् श्रद्धा भी उत्पन्न होती है। यह उपन्यास केवल मनोरंजन की सामग्री नहीं-गम्भीर मानव स्वभाव का अति मनोरंजक चित्र है-पुस्तक का तीसरा संस्करण छपा है। मूल्य सजिल्द १॥)

२—हृदय की प्यास—रूप और प्रेम दो प्रतिद्वन्द्वी शक्तियाँ हैं। रूप ऐसा शैतान है कि प्रेम की पवित्र धारा को वासना की ओर झुका कर ही दम लेता है।

इस उपन्यास में लेखक ने मनुष्य की सूक्ष्म मनोवृत्तियों का उत्थान, पतन, उद्वेग और शमन इस खूबी से किया है कि वाह ! किसे रूप की प्यास न लगी होगी, ख़ासकर यौवन की दुपहरी में। पाठक, इस उपन्यास को पढ़कर ज़रा देखिए तो ? मूल्य सजिल्द २)

३--अक्षत लेखक की ८ अमर कहानियाँ। निर्जीव लेखनी किस भाँति रोती हँसती और नाचती गाती है, यह आप इस पुस्तक में देखिए। कभी उल्लास सोते हुए यौवन को ठोकर मार कर जगावेगा, कभी आतङ्क छाती में एक घूँसा मारेगा, कहीं आप ठगे से रह जावेंगे, कहीं आप दिल खोलकर रो उठेंगे। सजिल्द का मूल्य १॥)

४--उत्सर्ग (नाटक)--यह छोटासा नाटक क्या है, आग का वह दहकता अंगारा है जिसे बुझाने को शताब्दियों के आँधी मेंह भी काफ़ी नहीं। किस भांति चित्तौड़ पर सीसौदिया जूझ मरे और प्रबल अकबर को पददलित किया। किस भांति १४ हज़ार राजपूतानियाँ जल कर राख हो गईं ! देखने सुनने योग्य है। मूल्य ॥)

५--गोलसभा --लण्डन के सेन्ट जेम्स पैलेस में बैठकर

कैसी २ क़ीमती खोपड़ियों ने टक्कर लीं। और किस भाँति भारत के लोह पुरुष ने योरोप की राजनीति को नंगा किया। पढ़िए। मूल्य २)

६—इस्लाम का विष वृक्ष—किस भाँति अरब से यह लाल लोहे का अंगारा उठा और मध्य ऐशिया को चीरता हुआ योरोप तक घुस गया। किस प्रकार अरबों ने मुहम्मदी झण्डे के नीचे पृथ्वी की सम्पदा भोगी। भारत को इस्लाम के चरण तल में दबकर कैसी २ यम यातनाएँ भोगनी पड़ी। किस भाँति प्रबल मुग़ल साम्राज्य का दिगन्त गौरव बढ़ा और फिर भाग्य चक्र में पड़कर वह ७ करोड़ का तख्त-ताऊस किस प्रकार किसी अज्ञात जादूगर की फूँक से उड़ कर लोप हो गया! सबके ऊपर योरोप की शक्तियाँ फिर किस ठाठ से जमकर बैठीं। यह इस ग्रन्थ में पढ़िये। आपके होश उड़ जावेंगे।

यह ग्रन्थ लेखक के प्रसिद्ध अप्रकाशित ग्रन्थ 'तब, अब क्यों और फिर, का एक अध्याय है, जो गत दश वर्षों से प्रकाशित होने के लिए अनुकूल समय की प्रतीक्षा कर रहा है। मूल्य सजिल्द ३) अजिल्द २॥)

मैनेजर—प्रकाशन-विभाग

संजीवन-इन्स्टीट्यूट, दिल्ली।

आरोग्य-मन्दिर की सेवाऐं

१—इस मन्दिर की स्थापना उत्तर भारत के श्रेष्ठ चिकित्सक आचार्य श्रीचतुरसेन शास्त्री महोदय ने अपने निजू व्यय से की है। इसका उद्देश्य सर्व साधारण को बिना किसी प्रकार की फीस आदि लिये आचार्य महोदय की बहु मूल्य चिकित्सा से लाभ पहुँचाना है।

२—बाहर के यात्रियों को अपने आने की सूचना प्रथम दे देने से सुविधा होगी। उन्हें क्या रोग है कितने आदमी साथ होंगे, उन्हें कितना स्थान और क्या २ सुविधाऐं चाहिऐ, आदि सभी बातें संक्षेप से स्पष्ट लिख देनी चाहिऐ। स्थान स्त्री विभाग में चाहिये या पुरुष विभाग में, यह भी लिखना चाहिये।

३—राजा, रईस, और सर्व साधारण को उनकी सुविधा के उपयुक्त स्थानादि का यथाशक्ति प्रबन्ध मन्दिर की ओर से है, सर्वसाधारण से औषध आदि का कुछ मूल्य नहीं लिया जाता, तथा जो भाई स्वीकार करें उनके लिये भोजन का प्रबन्ध भी मन्दिर की ओर से होता है। किसी से किसी भी प्रकार की फीस नहीं ली जाती है।

४—आचार्य महोदय संग्रहणी और क्षय के विशेषज्ञ हैं। गत ११ वर्षों से आप इन मनुष्यमात्र के भयानक

शत्रु रूप रोगों के अनुसन्धान में लगे हैं और बहुत कुछ सफलता प्राप्त की है। अतः इन रोगों के रोगियों को आने से अधिक लाभ की सम्भावना है। इसके सिवा, वन्ध्यात्व, नपुंसकत्व, लकुआ, उन्माद, हिस्टीरिया, स्वास, रक्त विकार, पीनस आदि रोगों की भी आप अव्यर्थ चिकित्सा करते हैं।

५—यदि कोई सज्जन बड़े २ शहरों में रहने, अधिक परिश्रम करने, तथा रोग शोक आदि के कारण दुर्बल और कमज़ोर हो गये हों—उन्हें कोई ख़ास रोग न हों किन्तु वे अपना स्वास्थ्य सुधारने तथा नियमित जीवन बनाने को कुछ दिन मन्दिर में रहना चाहें तो उनके लिये खास प्रबन्ध है।

६—जो लोग पत्रव्यवहार द्वारा आचार्य महोदय की रोग के सम्बन्ध में सलाह लेना या चिकित्सा कराना चाहते हैं उन्हें सब हाल खुलासा पत्र में लिख देना चाहिये तथा पत्र पर 'रोगी, शब्द लिख देना चाहिए।

७—सब प्रकार के पत्रोत्तर के लिये -)। का टिकट भेजना आवश्यक है।

पत्रव्यवहार का पता—

'व्यवस्थापिका, 'आरोग्य-मन्दिर,

शाहदरा, दिल्ली।